भूतों के देश में आईसलैंड

प्रवीण कुमार झा

भूतों के देश में - आईसलैंड

लेखक: प्रवीण कुमार झा

ASIN: B07B74WM8P

प्रथम संस्करण : मार्च 2018

प्रकाशक: Bonzuri

वेबसाइट: www.bonzuri.com

ईमेल: contact@bonzuri.com

आवरण: Zodel Studios

संपादन: अभिषेक कुमार

प्रेत परिकथा

प्रेतों से पहली मुलाकात मेरी गाँव में ही हुई होगी। शहर में प्रेत नहीं मिलते। जैसे भेड़-बकरी कम नजर आते हैं, रात को तिलचट्टे की आवाज कम सुनाई देती है, जुगनू नहीं दिखते, वैसे ही प्रेत भी नहीं दिखते। प्रेतों की खासियत है कि उनको शांति पसंद है। जरा भी हलचल हुई, प्रेत बेताल की तरह फुर्र हो जाएँगे। गर आदमियों के बीच हो-हल्ले में ही रहना होता, तो आखिर प्रेत क्यों बनते?

गाँव में तो यूँ ही छुटपन में प्रेत दिख जाते। कभी डर जाता, कभी ध्यान ही न देता। वो पीपल के पेड़ पर दिख गए, तो सड़क छोड़ खेतों में उतर जाता। गर वो खेतों में दिख गए, तो हाथ में मिट्टी का ढेला ले कर तेज कदम चलने लगता। मिट्टी से डरते हैं प्रेत। डरते हैं कि जिस मिट्टी से निकले हैं, उसी में न वापस मिल जाएँ। इसलिए गाहे-बगाहे उड़ते रहते हैं, या पेड़ की शाखा पर जा बैठते हैं। पीपल पर, बबूल पर, इमली पर, जामुन पर, मौलश्री पर, या किसी पुराने बरगद पर। दरअसल गाँव में प्रेत भी सर्वहारा का ही हिस्सा हैं। पार्ट ऑफ़ फैमिली। उनसे कोई खौफ नहीं। कई प्रेत तो अपने परिजनों के अंदर ही होते हैं, जो अजीब सी हरकतें करने लगते हैं। उनसे भय नहीं होता, पर उनकी चिंता होती है। इलाज वगैरा होता है, झाड़-फूँक भी। और प्रेत भी थक-हार कर कहते हैं कि दूसरा शरीर पकड़ लो, यहाँ तो बड़ी दुर्गति है। यह कितना सुंदर स्वरूप होगा प्रेतों का! कभी इस शरीर तो कभी उस शरीर। एक हम हैं कि उसी शरीर में अटके पड़े हैं। कभी तोंद निकल जाती है, कभी खाज-खुजली, तो कभी नाक बहना। प्रेत के जीवन में यह तमाम झंझट हैं ही नहीं।

गाँव के प्रेतों से मुलाकात कुछ खास नहीं रही। वो नेपथ्य में हर जगह ही थे, पर खुल कर मंच पर नहीं आए।

पहली बार जब प्रेतों से औपचारिक भेंट हुई, तभी उनसे बतिया पाया, उन्हें समझ पाया। बंगाल के तारापीठ का श्मशान प्रेतों का एक कॉरपोरेट ऑफ़ीस है। वहाँ देश के गणमान्य प्रेत जुटते हैं, शास्त्रार्थ करते हैं। मैं जब तारापीठ पहुँचा और वहाँ के लंबे-लंबे गुलाबजामुन देखे, तभी समझ गया कि यह स्थल ही विकृत है। श्मशान के मध्य मंदिर बना रखा है, और परिसर में कंकाल बिखरे पड़े हैं। जितने लोग नहीं, उससे अधिक कोलाहल। जितने पेड़ नहीं, उससे अधिक जंगली माहौल। जैसे हजारों 'बोस' के स्पीकर लगाकर कोई भाग गया हो, जिनसे विचित्र आवाजें आ रही हों। इन पर नियंत्रण बस औघड़ बाबाओं का है, जिन पर नियंत्रण किसी का नहीं। पास जाओ, तो पत्थर लेकर खदेड़ दें। दूर से छिटको तो "बच्चा! इधर सुन!" कहकर बुला लें।

तांत्रिकों से पता लगा कि यह योगिनी तंत्र की स्थली है। यह बाममार्गी तंत्र भी क्या रसिक तंत्र है! पंच 'म' कार साधना कभी सुना है? पाँच वस्तुओं से तंत्र-साधना। मद्य

(शराब), मांस, मत्स्य (मछली), मुद्रा और मैथुन। अंग्रेजी में कहें तो वाइन, मीट, मनी एंड सेक्स। हालाँकि इनके अर्थ गूढ़ हैं, पर उस वक्त कहाँ अर्थ समझ पाता? लगा कि बस यहीं गांजा पीते, गुलाबजामुन खाते जीवन गुजर जाए तो कैसा हो?

जो भी हो, मंदिर परिसर तक पहुँच कर तमाम प्रेतों से वार्तालाप हो ही गया। घंटे भर बतियाता। फिर पता लगता कि जिससे बतिया रहा हूँ, वो तो है ही नहीं। पर मुझे क्या? 'वर्चुअल' लोगों से गप्प हाँकने का अलग ही मजा है। रात्रि तक तो पूरे श्मशान में योगिनी ही योगिनी। इतनी आकर्षक प्रेतिन जीवन में कम ही देखी, जिनकी छवि अब तक मष्तिष्क में है। खुले लंबे गेसू, और तीखी आँखें। यह अब भी लगता है कि स्वप्न ही रहा होगा, पर छुटपन में ही यौवन का प्रथम अहसास इसी स्थान पर हुआ।

"यहाँ हड्डियाँ क्यों बिखरी है बाबा?"

"हम इन हड्डियों से पूजा करते हैं। और ये भैरव की भी कृपा है।" कहते हुए औघड़ ने एक कुत्ते को ढेला मारा।

"इनका क्या दोष?"

"ये कुत्ते ही तो नीचे गड़ी लाशें उखाड़ लाते हैं।"

"गड़ी लाशें? पर यह तो हिन्दू श्मशान है।"

"सबकी लाश कहाँ जल पाती है? और सब जल ही जाएगी तो हम पूजा कैसे करेंगे?"

"पर गाड़ने का क्या मतलब?"

"उम्र कितनी है तुम्हारी?"

"चौदह वर्ष।"

"गर बारह वर्ष से कम में मरते, तो दफन ही होते। जलाए नहीं जाते। हम औघड़ भी गाड़े ही जाते हैं। हमें कौन जलाएगा? बाल-बच्चा तो है नहीं।"

"पर इतनी हड्डियाँ?"

"सबके पास लकड़ी के पैसे भी नहीं। मुखाग्नि दे दी। बाकी का शरीर गाड़-गुड़ कर भाग लिए।"

"ओह! यह तो बड़ी दुर्गति है।"

"माँ आद्या-शक्ति के पास दुर्गति? जा! तू नहीं समझेगा।"

मैं उस वक्त नहीं समझा, पर देर से कुछ-कुछ समझने लगा। माँ आद्या-शक्ति का पूजन भी करने लगा, और इन तमाम बिखरी हड्डियों में वो ढूँढने लगा, जो लोग नहीं ढूँढते। शक्ति और भक्ति की बात रहने देता हूँ। वो संजीदगी भरा मामला है। वापस प्रेतों पर ही आता हूँ।

तारापीठ के बाद कई वर्षों से प्रेतों से खास संपर्क नहीं रहा। अब पटना के संजय गांधी उद्यान में घूमते अंग्रेज भूत को तो सबने देख रखा है। वो भूत क्या, अब वहाँ के नागरिक ही हैं। शायद अब आधार कार्ड भी बनवा लिया हो। रोज तड़के सूर्योदय से पहले दौड़ते मिल जाएँगे। उनसे न मिलें हो, तो जरूर मिल आइए। वो पटना के कुर्जी अस्पताल के प्रेत की तरह डराते नहीं, निश्छल दौड़ते रहते हैं। भावना-हीन। सपाट। यूँ लगता है कि ये कभी पटना के लाट साहब रहे होंगे। जिम कॉरबेट के खास। जब मोकामा घाट पर जिम कॉर्बेट रेलवे में अफसर थे, ये सहयोगी रहे होंगे। साथ बाघ वगैरा देखने जाते होंगे। अब यहीं पशु-उद्यान में पिंजरे-बंद जानवरों को देख मन मसोस कर रह जाते हैं। यह मलाल उनकी आँखों में आज भी नजर आता है।

पुणे गया तो वहाँ ससून हस्पताल के ‘बर्न्स’ विभाग के पास कुछ प्रेत देखे जाते, और उसके साथ ही मानसिक रोग विभाग भी था। यह कहना कठिन था कि पागल जिन अदृश्य लोगों से बतिया रहे हैं, वो वाकई वहाँ मौजूद हैं या यह उनका पागलपन है। पर पागल रात को ही क्यों गप्प मारते हैं? और प्रेत पागलों से ही क्यों संपर्क करते हैं? कहीं वे उन्हें समर्थ और हमें पागल तो नहीं समझते? प्रेत-बुद्धि भी विचित्र है। हमारे अस्पताल में एक आत्मा और थी, और यह बात कोई मानेगा नहीं। वो कमरा आज भी बंद ही रहता है, जहाँ कभी येरवडा जेल के एक राजनैतिक कैदी का ऑपरेशन हुआ।

वो रात तूफानी थी, जबकि पुणे में अमूमन रात तूफानी होती नहीं। कर्नल मैडॉक पर यह जिम्मेदारी थी कि ऑपरेशन जल्द से जल्द हो, और अपेन्डिक्स निकाला जाए। जाहिर है कि कैदी कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। पर तूफान की वजह से अस्पताल की बिजली ही चली गयी। आखिर एक लालटेन में ऑपरेशन किया गया। इस ऑपरेशन के दौरान क्या हुआ, यह कहना कठिन है। एक बूढ़े गार्ड ने बताया कि शरीर ऑपरेशन के दौरान ही मृत हो गया। हृदय की धड़कन रुक गयी, और उस वक्त उस आत्मा से अचानक कमरे में रोशनी फैल गयी। ऑपरेशन जारी रखा गया, और वो जीवित हो उठे। इस पूरे ऑपरेशन की एक पेंटिंग बना कर रख दी गयी, और कमरा बंद कर दिया गया। कई लोगों ने कोशिश की। मैंने भी की। पर मैंने अंदर क्या देखा, यह रहस्य ही रहने दें। सच तो यह है कि मृत्यु जिसके हाथ होनी थी, वो अभी चौदह वर्ष का बच्चा था और कुछ फर्लांग दूरी पर ही रहता था। लगभग पच्चीस वर्ष बाद वो मृत्यु का कारक बनेगा, पर फिलहाल इस आत्मा का शरीर में रहना आवश्यक था।

पुणे के येरवडा इलाके में ही एक भूत-बंगला हुआ करता। अब ध्वस्त हो गया, और वहाँ की सड़क चौड़ी कर दी गयी। पर वहाँ भूत से मुलाकात करने एक रात गया जरूर। लोहे की घुमावदार ‘स्पाइरल’ सीढ़ी जो छत की ओर जाती, और घुप्प अंधेरा। टॉर्च से बस मकड़-जाल नजर आते। उनको भेदता जैसे-तैसे ऊपर चढ़ने लगा कि तभी अचानक किसी ने पैर नींचे की ओर खींच लिया और मैं नीचे लटक गया। दरअसल उस ‘स्पाइरल’ सीढ़ी में एक पायदान ही टूटा हुआ था, और मैं उसी से गिर कर लटक गया था। वापस सीढ़ीयों से उछल-कूद करते छत तक पहुँचा। माहौल फ़िल्मी ही था। छत पर पेड़ों की टहनियाँ झुकी हुई थी, जिनसे छन कर चंद्रमा की रोशनी आ रही थी। भूत महाराज भी इसी पेड़ पर बैठे मुझे घूर रहे थे। यह तो तय था कि वो मुझे देख रहे हैं, पर मैं उन्हें नहीं देख पा रहा था। आखिर पुणे के केंद्र में मुख्य सड़क पर एक इमारत भूत-

बंगला करार दी जाती है, और कोई उसमें रहता नहीं। यह बात यूँ ही मुमकिन नहीं। बंगले में कुछ रहस्य तो था ही। पर मेरी तफ्तीश में न कोई तस्वीर मिली, न कोई चिराग, न कोई घुँघरू, और न कोई कागज। यह बस एक पुरानी दो-मंजिली इमारत ही थी। और कुछ नहीं।

इन बातों को अब कई वर्ष हो गए। इस मध्य भी कई प्रेत मिले होंगे, पर उनकी कहानियाँ भी मिथ्या ही कहलाएगी। चाहे वो केन्टकी (अमरीका) के 'मैमथ केव्स' गुफाओं में दिखी आकृतियाँ हों, या बनरघट्टा (बेंगलुरु) की वो महिला जो गाड़ी के सामने से ओझल हो गयी। जिसे भी सुनाता हूँ, कहता है पी रखी होगी। गांजा पीकर भूत दिखते हैं, पर गांजा मैं पीता नहीं। और मुझे यूँ ही भ्रम अक्सर नहीं होते। पर क्या पता, हो भी गया हो?

जब से सुना, आईसलैंड में प्रेत बसते हैं, इच्छा थी कि इन विदेशी प्रेतों से भी एक बार रू-ब-रू हो लूँ। कुछ किताबें मंगवा ली, और कुछ सी.डी.। उनके प्रेत और 'विचक्राफ्ट' की कहानियाँ पढ़ने लगा। पर पता लगा कि वहाँ पहले से बुकिंग करानी होगी। विदेशी प्रेत अपॉइंटमेंट लेकर मिलते होंगे। प्रेतों की दुनिया में भी कुछ विकसित होंगे, कुछ विकासशील। वहाँ के प्रेत सुना है वाईकिंग टोपी लगाए होते हैं। और उनसे भी खूबसूरत वहाँ की डायन। उनके पैर तिरछे और लंबे काले बाल नहीं होते जो आँखों के सामने आ जाते हैं। उन डायनों के जितने भी उकेरे हुए चित्र दिखे, आदिम जमाने की 'टू-पीस' में घूमती प्रेत ही दिखी। बर्फ के बीच बिकनी में घूमना मानव के बस की है भी नहीं। किसी ने ये भी कहा कि वो 'निम्फ़ोमैनियैक' डायन हैं, पुरूषों को पकड़ कर गुलाम बना लेती हैं। तो किसी ने कहा कि उनको गुप्त-रोग है। प्रेत को भी गुप्त-रोग? इन बातों पर कौन भरोसा करे? खैर, मैंने सारी बुकिंग करा ली और आखिर चल पड़ा प्रेतों के देश-आईसलैंड!

प्रेत-लैंड के ऊपर

अथाह समुद्र के बीच एक हिमाच्छादित द्वीप, जहाँ कभी बलात्कारियों का राज था, और आज स्त्रियों के लिए सर्वोत्तम देश। बलात्कारियों की बात गलत नहीं कह रहा। विश्व के सबसे खूंखार बलात्कारियों में वाईकिंग का ही उल्लेख आता है। वो यूरोप से सेल्टिक कन्याओं को उठाकर इस द्वीप पर ले जाते, और इनका बलात्कार करते। आईसलैंड कहीं इन नाजायज औलादों के संतानों से तो नहीं बना? और कहीं वो प्रताड़ित महिलाएँ ही डायन बन कर तो नहीं घूमतीं? मुझे तो लगता है कि यह सब बकवास है। लोग तो ये भी कहते हैं कि वाईकिंग्स ने आयरलैंड पहुँच कर भी सभी स्त्रियों का बलात्कार कर दिया था। तो क्या आयरलैंड भी इन बलत्कृत महिलाओं की वंशज है? ये सब बेकार की बातें हैं। गप्प है। और गर सच भी है तो इसमें उनका क्या दोष? मैं वाईकिंग्स के इतिहास पर कई महीनों से सर धुन रहा हूँ, वैज्ञानिकों की पढ़ रहा हूँ। इतने भी बुरे नहीं थे वाईकिंग कि सबका बलात्कार करते फिरें। खूंखार जरूर थे, और संधि-समझौते में ज्यादा भरोसा न था। जो समझौता करने आते, उनके टुकड़े-टुकड़े कर देते। पर बलात्कार की पक्की खबर नहीं मिली। अब आईसलैंड पहुँच कर कुछ और तफ्तीश करूँगा।

जाने से पहले फ़ोन के व्हाट्स-ऐप्प पर किसी शुभचिंतक ने बताया कि आईसलैंड में इतनी गोरी युवतियाँ हैं कि पुरुष कम पड़ गए हैं। अक्सर इस तरह के मेसैज के साथ अमरीकी भोजनालय 'हूटर' की मांसल कन्यायें लगा दी जाती हैं। कई मेसैज देख कर यह अंदाजा लग जाता है कि इन्हें पहले भी कहीं देखा है। और आईसलैंड की कन्याओं की असल तस्वीरें मैंने पहले ही छान मारी थी। ये मेल नहीं खाती। किसी ने यह भी कहा कि वो जबरदस्ती विवाह कर लेती हैं। भला आईसलैंड में भी 'पकड़ौआ' विवाह?

आईसलैंड की महिला-बहुलता वाली बात भी मिथ्या ही है। हाँ! बराबर जरूर हैं। जितने पुरूष, उतनी स्त्रियाँ। न एक कम, न एक जियादा। भगवान् ने सोच-समझ कर ही यह बने-बनाए जोड़े भेजे ताकि यह द्वीप चलता रहे, बंद न हो जाए।

यह बात और है कि वहाँ मनुष्यों के अतिरिक्त भी कई विचित्र लोग हैं, जिन्हें वो 'एल्व' कहते हैं। एक तरह के भूत-प्रेत ही, किंतु वो समाज का हिस्सा ही हैं। गर इस बात पर हँसो, तो आईसलैंड वाले बुरा मान जाते हैं। गर आप भूत-प्रेत नहीं मानते, तो आईसलैंड आने का मतलब ही नहीं। अब भला मेरे जैसे विज्ञान के व्यक्ति के लिए इस द्वीप पर क्या काम? पर सोचा कि कुछ पल के लिए तांत्रिक बन जाता हूँ। और भूतों से संवाद स्थापित करता हूँ। और सुंदरी डायनों से भी। यहाँ वो 'ट्रॉल' कहलाती है। और उनसे जुड़ी हैं कई यौन-कथाएँ। यह वो देश भी है, जहाँ लिंगों की पूजा होती है। घोड़े के लिंग, और तमाम पशुओं के लिंग का संग्रह कर तंत्र करते हैं। आप चाहे 'ब्लैक-मैज़िक' कह लें, पर तांत्रिक

से जब संवाद में यह शब्द प्रयोग किया, वो नाराज हो गए। यह 'ब्लैक-मैज़िक' नहीं है। इसमें काला कुछ नहीं। और गर कुछ काला है भी, तो दुनिया में कहाँ काला नहीं। यह धरती ही धूसर है। न सफेद, न काली।

जब नॉर्वेज़ियन समुद्र के ऊपर जहाज उड़ रहा था, तो बादल छँट गए थे। दस कि.मी. नीचे नील समुद्र साफ दिख रहा था। यूँ लग रहा था कि हम किसी वीरान स्थान पर जा रहे हैं, जहाँ मानव-सभ्यता खत्म हो जाएगी। और यह सच भी है। आईसलैंड और उसके पड़ोसी ग्रीनलैंड में न मनुष्य मिलते, न जानवर। अब ग्रीनलैंड, विश्व का सबसे बड़ा द्वीप, और मात्र पचास हजार लोग। ये पृथ्वी के वो अंश थे, जहाँ मनुष्य सबसे अंत में पहुँचा। नॉर्वे के वाइकिंग अपनी जहाज पर कभी पहुँचे, पर तब तक बाकी की धरती पूरी तरह बस चुकी थी। और इस द्वीप पर बसने का कोई प्रयोजन था भी नहीं। बंजर पथरीली जमीन, जहाँ हर पल तूफान आता और ज्वालामुखी फटती। इस पर मनुष्य भला रहे तो रहे कैसे? पर मनुष्य भी अजीब जीव है। उसकी इच्छाएँ असीमित हैं। कोई मैनहैट्टन की बड़ी इमारत में रहना चाहता है, कोई खेती-बाड़ी कर गाँव में खुश है। कोई ग्रीस के किसी द्वीप पर सिगरेट-शराब पीते सौ साल जीना चाहता है, तो कोई समुद्र से 'व्हेल' पकड़ कर हफ्ते भर की खुराक सुनिश्चित करना चाहता है।

आप गर मानचित्र लेकर बैठें तो उत्तरी ध्रुव के आस-पास बर्फ के कई भू-खंडों में एक छोटा सा गोल-मटोल द्वीप नजर आएगा आईसलैंड। पर इस छोटे से द्वीप के शहरों के नाम इतने लंबे कि बोलना असंभव। अब जैसे एक गाँव का नाम पढ़ा- क्लोफ़ालाशारशाफ्तूर। भला इस बंजारे द्वीप पर ऐसे नाम रखने की क्या वजह होगी, जब असंख्य लोगों की धरती में रामपुर और पटना सरीखे सुलभ नाम हैं? यह भी नहीं कह सकते कि इनकी भाषा हमसे अधिक समृद्ध है। संस्कृत तो नहीं, पर इनकी देवभाषा समृद्ध तो है।

हजार वर्षों से भी अधिक समय से यहाँ की भाषा ज्यों-की-त्यों है। वो भारत की तरह संस्कृत से हिंदी तक सफर न कर सकी। अब तक अपनी पुरानी भाषा पर ही अटकी है। और इसलिए क्लिष्ट है। कभी यहाँ के लोगों ने सुलभ बनाने का सोचा ही नहीं। भाषा तो छोड़िए, नाम तक ज्यों-की-त्यों है। यहाँ आदिम जमाने के नाम ही चल रहे हैं, और गर आप अपने बच्चे का नाम पप्पू-बंटी रखना चाहते हैं तो आपको 'आईसलैंड नामकरण संगठन' से इजाजत लेनी होगी। अब सोचिए गर भारत में भी महाभारत कालीन अश्वत्थामा और धृष्टद्युम्न जैसे नाम ही चलें, तो कैसा हो? हद तो यह है कि सबके उपनाम भी लगभग एक से हैं। उपाधि की तरह।

दरअसल आदिम काल में उपनाम की परंपरा रही ही नहीं होगी। दुर्योधन झा या दुर्योधन चतुर्वेदी या युधिष्ठिर सिंह नहीं थे। वो बस दुर्योधन और युधिष्ठिर थे। वर्ण जरूर थे, किंतु उपनाम से उनकी पहचान नहीं थी, कर्मों से ही थी। अब पूरे विश्व में ही नाम और उपनाम आए, किंतु आईसलैंड इसमें भी अलग निकला। नाम अनेक, उपनाम एक।

यह नाम प्रणाली साधारण और ग्राम्य-जीवन शैली वाली लगती है। जैसे गांवों में बुद्धन का बेटा बुधना-बेटा कहलाता है। या हनुमान अंजनी-पुत्र कहलाते हैं, उसी तरह। आईसलैंड में जॉन के बेटे का उपनाम जॉनसन। सिगमंड के बेटी का उपनाम

सिगमंडदौतिर। हर व्यक्ति या तो सन है या दौतिर। बाकी कोई अलग से उपनाम नहीं।

बातों-बातों में जहाज आईसलैंड के ऊपर आ गया। नीचे पूरी धरती सफेद नजर आ रही है। नॉर्वे जैसे पहाड़ नहीं, कहीं कोई हरियाली नहीं, कोई विषमता नहीं। एक सफेद सपाट धरती। बिल्कुल कोरे कागज की तरह, जिस पर कभी कुछ लिखा नहीं गया। न कोई इमारत नजर आती है, न कोई सड़क। शायद सब हिम के परतों से दब गई है। या शायद कुछ है ही नहीं। यह हिम का मरूस्थल है। पर ताज्जुब है कि बादल भी नजर नहीं आ रहे। यहाँ बादल क्यों होंगे और बरस कर करेंगे ही क्या? तभी तो मरूस्थल है। कहीं इस हिम-प्रदेश में एक जल-धारा सी नजर आई तो यूँ आह्लादित हुआ जैसे मंगल पर जल ढूँढ लिया हो। पर वो जल-धारा नीचे उतर कर कहीं मिली नहीं। आईसलैंड में गरम फव्वारे, और गरम झील जरूर हैं, जो ज्वालामुखी के गरम लावे में उबलते रहते हैं, पर शीतल जल-धारा कम ही नजर आती है।

आखिर जहाज एक बर्फीले हवाई-पट्टी पर उतरा, जहाँ तेजी से एक-एक पट्टी साफ की जा रही थी। यह नजारा नॉर्वे में भी दिखता है, पर यहाँ हालात अधिक बुरे हैं। तेज हवाएँ चल रही है, और जिस पट्टी की बर्फ साफ हुई, वहाँ दूसरे पट्टी से बर्फ उड़ कर आ गई। यहाँ बर्फ एक जगह टिक कर नहीं रूकती, वो हवा में चक्रवात की चरह गोल-गोल तेज चक्कर लगा रही होती है। यह दृश्य भयावह तो है ही, पर लगता है जैसे ये हवाएँ कानों में कुछ कह कर लौट रही हों। कुछ संवाद कर रही हों। मुझे यह आभास होने लगा कि यहाँ कुछ अप्राकृतिक शक्तियाँ तो हैं, पर विज्ञान की आँखों से देखा, तो तूफान के कई कारण भी नजर आए। समुद्री द्वीपों में तूफान तो आते ही हैं।

आईसलैंड के ठीक उत्तर और दक्षिण में कोई देश नहीं। अथाह समुद्र के बाद उत्तर में आर्कटिक भूखंड, और दक्षिण में अंटार्कटिका। यह एक आश्चर्य ही है कि यह भू-खंड आखिर कैसे बच गया? हालांकि इसे तोड़ने की प्राकृतिक कोशिशें जारी हैं। भीषण बर्फबारी, तूफान, भूकंप और ज्वालामुखी विस्फोट। आईसलैंड का झंडा भी यही दर्शाता है। नीला रंग पहाड़ों को, लाल रंग ज्वालामुखी को, और सफेद रंग बर्फ को। प्राकृतिक आपदाएँ आईसलैंड के लिए जीवन का हिस्सा है। और इन आपदाओं से ही भूत-प्रेतों का भी रिश्ता है।

पर भूत-प्रेत आखिर मिलेंगें कहाँ?

छुपे हुए लोग (हुल्डुफोक)

फ्लाइट से उतरा तो गाड़ी भाड़े पर उठाने गया। उस रेन्टल एजेंसी को होन्डा की गाड़ियों से प्रेम था। एक बर्फीले मैदान पर सैकड़ों होन्डा गाड़ियाँ खड़ी थीं, उन पर भी मोटी बर्फ जमीं थीं। एक होन्डा की गाड़ी मैंने भी चुन ली, ऑटोमेटिक। अब यह एक पैर से चलने वाली गाड़ियाँ ही लोकप्रिय हैं। कुछ दिनों में ड्राईवर पालथी मार बैठेगा, और गाड़ी ‘ऑटो-पाइलट’ की तरह चलेगी। उसको बता दो कि कहाँ जाना है, गाड़ी खुद-ब-खुद चल लेगी। हालाँकि ऐसी गाड़ियाँ चल भी रही हैं। पीट्सबर्ग में बाकायदा ऑटो-ड्राईव टैक्सी चल रही हैं, जो खुद ही लेन-चेंज कर लेती हैं, किसी गाड़ी को रास्ता दे देती हैं, पदयात्रियों के लिए रूक जाती हैं। ड्राईवर बैठा ताश खेलता रहे। अब कोई अनजाना व्यक्ति तो डर जाए कि भला अपने-आप कैसे स्टीयरिंग घूम रही है? यह जरूर प्रेत का मामला है।

मैंने उस एजेंसी वाले से आखिर पूछ लिया कि प्रेत से मुलाकात कहाँ संभव है?

उसने बताया कि भूत-प्रेतों का ठिकाना ज्वालामुखी के लावा पत्थरों के मध्य अधिक है। वो इनसे बनी गुफाओं के मध्य रहते हैं। वे यहाँ ‘हुल्डुफोक’ कहलाते हैं, जिसका अर्थ है ‘छुपे हुए लोग’। यह कोई मिथक नहीं। आईसलैंड के ज्यादातर बाशिंदे मानते हैं कि वो वाकई रहते हैं, और कई लोग उन्हें देखने का दावा भी करते हैं। इसमें शिक्षित होने या ज्ञानी होने का संबंध नहीं। वो छुपे व्यक्ति इन पत्थरों के मध्य हैं ही। उनका कद छोटा है, कान बड़े हैं, और पैर इस कदर चौड़े हैं कि इन पथरीले रास्तों पर चल सकें। पर वो सबको नहीं नजर आते। वो उन्हें ही नजर आते हैं, जिन्हें उन पर विश्वास है।

हालात इस कदर हैं कि जब कोई बिल्डिंग बनानी होती है, यह सुनिश्चित किया जाता है कि उन इलाकों में न बने जहाँ ये ‘हुल्डुफोक’ या अदृश्य लोग रहते हैं। यह लोग जानते हैं कि उनका इलाका कौन सा है। अब कोई वास्तु-विशेषज्ञ सुनिश्चित कर दे कि फलाँ स्थान पर भूत-प्रेत नहीं, तो घर बनाया जाए। यहाँ तक कि आईसलैंड में लोग पत्थर नहीं फेंकते, इस डर से कि किसी ‘एल्व’ यानी प्रेत को न लग जाए। एक विकसित यूरोपीय देश में ऐसी बातें सुन अजीब लग सकता है पर आईसलैंड के लोगों को यह बातें सामान्य लगती है।

हालिया एक बड़ी सड़क बनाने में सबसे बड़ा रोड़ा था ‘ओफ़ेग्सकिर्या’ का पत्थर। यह पत्थर लगभग आठ हजार वर्षों से यहाँ के अदृश्य लोगों का बसेरा था। लोग बताते हैं कि जब यहाँ डायनामाइट से पत्थर तोड़े जा रहे थे, इनकी चीखें सुनाई देती। ये प्रेत चिल्लाते रहे, बम फटते रहे, सड़क बनती रही। अब यह पत्थर नेस्तनाबूद हो चुका। हजारों वर्षों से रह रहे ये शांतिप्रिय प्रेतों की बस्ती तबाह कर दी गई। हालांकि यहाँ के कुछ प्रेतपंथी नेताओं ने विरोध किया, पर जब विज्ञान-रथ चलता है तो इन

अंधविश्वासों का रोदन अवश्यंभावी है। आखिर ये प्रेत कर क्या लेंगें? दो-चार भूकंप-तूफान और ला देंगें। कुछ गाड़ियाँ सड़क से उतार देंगें। इसकी तो सबको आदत ही है। बेहतर है कि पिंजरे-बंद रह कर मेरे जैसे प्रेतप्रेमी पर्यटकों का मनोरंजन करें। हम इनकी ओर मांस के लोथड़े फेंक ताली बजाएँ। साथ सेल्फ़ी खींचें। और इन पर किताबें लिखें।

हालांकि सत्तर के दशक में प्रेत अधिक शक्तिशाली थे, और विज्ञान कमजोर। उन दिनों जब प्रेतों की बस्ती पर बुलडोज़र चला, तो प्रेतों ने एक पानी का पाइप तोड़ दिया। मछली फार्म की सत्तर हजार ट्राउट मछलियाँ मर गईं। कुछ दिनों में एक बुलडोज़र कर्मी मर गया। कभी कोई मशीन यूँ ही टूट जाती। प्रेतों के उत्पात के सामने विज्ञान को हारना पड़ा। सड़क का काम रोक दिया गया। यह कहानी सब अपने ढंग से सुनाते हैं। कोई कहता है कि प्रेतों के ठहाके सुनाई देते। कोई कहता है कि गाड़ी आगे की ओर दौड़ाते, वो उल्टी दिशा में चलने लगती। और सबकी आंखो-देखी कानों-सुनी। कोई तर्क सुनने को राजी ही नहीं।

हम जब ग्रिन्डाविक नामक शहर पहुँचे, वहाँ कुछ इमारतें थी, पर लोग नहीं नजर आ रहे थे। यह भी भुतहा जगह ही लग रही थी, जहाँ चारों ओर काले धब्बेदार पथरीली जमीन थी। जैसे अभी-अभी कोई ज्वालामुखी फटी हो, और लावा चारों ओर बिखर गया हो। होटल में कोई व्यक्ति तो खैर नहीं था, ऑटोमैटिक इंतजामात थे। एक ‘कोड’ से चाभी का बक्सा खुलना था, और चाभी लेकर कमरे में जाना था। इसमें कुछ जादुई बात नहीं थी, यह साधारण ‘डिज़िटल लॉकर’ था। जाहिर है होटल के मालिक किसी बड़े शहर में रहते होंगे, और यह डिज़िटल व्यवस्था कर रखी होगी। लेकिन जादूगरी और प्रेतों की दुनिया भी समय के साथ डिज़िटल तो हुई ही होगी।

ग्रिन्डाविक समंदर किनारे बसा मछुआरों का गाँव है। आईसलैंड में हालाँकि अधिकतर परिवार मछुआरे ही हैं। इनका जीवन ही है, नावों और जहाजों की देख-भाल करना, समुद्र में जाल फेंक मछली मारना, समंदर के मध्य जाकर ‘व्हेल’ और शार्क ढूँढना, या भाला लेकर किसी समुद्री झील में विचरती मछली पर निशाना साधना।

होटल के पीछे कई नाव लंगर डालकर लगे थे, और मछलियों की सुगंध वातावरण में थी। भोजनालयों में भी भुने, तले, कच्चे, उबले और धुएँ में सुखायी मछलियाँ। लंबी-तगड़ी कॉड और हैडॉक मछलियाँ, लाल मांस वाली आर्कटिक सालमन, और बिल्कुल चपटी हैलिबट मछलियाँ। पड़ोस का ढाबा एक वृद्ध मछुआरे का था, जिनका कभी अपना बड़ा जहाज था। एक तूफान में डूब गया, और एक बिक गया। पर वो आज भी अपने उन दिनों को याद करते हैं, जब वो अपने जहाज के कैप्टन थे और टनों कॉड मछली पकड़ कर लाते थे। अब वो मछली खरीद कर पकाते हैं। और क्या खूब पकाते हैं!

“आप आईसलैंड में क्या खाते हैं अक्सर? मुझे वही खिलाइए।”

“हम तो मछली, भात, कुछ उबले आलू, सलाद और शकरकंद खाते हैं। और आप?”

“भारत में तो कई तरह के भोजन हैं, पर मेरे गाँव में यही खाते हैं।”

“मछली-भात और शकरकंद? फिर तो आपके गाँव से कुछ पुराना रिश्ता होगा हमारा।”

शकरकंद इन ध्रुवीय इलाकों में क्यों लोकप्रिय है, पता नहीं। इन्हें बस गरम इलाकों में ही उगाया जा सकता है, पर उबाल कर तले शकरकंद यहाँ सभी खाते हैं। पैकेट बनाकर खूब बिकते हैं, और लगभग रोज ही खाए जाते हैं। मैंने भी जितने शकरकंद नॉर्वे और आईसलैंड में खाए, उतने भारत में नहीं खाए। भारत में इस मीठे आलू की खास इज्जत नहीं। कम से कम इस हद तक नहीं कि हल्दीराम और बीकानेर वाले पैकेट बनाकर शकरकंद-भुजिया बेचें। स्कैंडिनैविया में शकरकंद हिट है। फल-सब्जियों की भी अपनी किस्मत है। कहीं का रंक, कहीं का राजा।

यूँ ही ग्रिन्डाविक की तटों पर टहल रहा था, तो दूर कहीं एक धुआँ सा उठता दिखा। जरूर कोई फैक्टरी होगी। पर यह धुआँ कुछ विचित्र सा था, तो कौतूहल हुआ। पर पूछूँ किससे? कोई मनुष्य तो नजर आए। इमारतें भी सुनसान नजर आती है, जबकि आज 'वीक-डे' है। आखिर एक अधेड़ महिला का ढाबा नजर आया। बाहर विशालकाय टायर वाली आर्कटिक गाड़ियाँ लगी हुईं थी। उन गाड़ियों की बात बाद में करूँगा, पर फिलहाल ढाबा घूम कर आता हूँ। ढाबे में हैंडलबार मूँछों और हार्ले-डेविडसन की जैकेट पहने कुछ लोग शराब पीते गप्पिया रहे थे।

"आइए! आप हिंदुस्तानी नजर आते हैं। पर आपके लिए कुछ खास भोजन नहीं है मेरे पास।"

"नहीं! मैं तो बस यह पूछने आया था कि दूर धुआँ सा क्या उठ रहा है?"

"वो धुआँ दरअसल एक प्रेत गुन्नु के कारण निकल रहा है।"

"आप मजाक कर रही हैं।"

"आप तो हिंदुस्तानी लगते हैं। क्या आप न्यूयॉर्क में रहते हैं?"

"नहीं। आपने ठीक पहचाना था। मैं भारतीय ही हूँ।"

"फिर तो आप मिथकों का सम्मान करना समझते होंगे।"

यह मीठा-तीखा व्यंग्य पूरे स्कैंडिनैविया की ही पहचान है। वो कई बार बात घुमा कर, कटाक्ष के साथ कहते हैं। पर गुन्नु प्रेत वाली बात सच थी। उस धुएँ के पीछे प्रेत का ही हाथ था। और मैं अपनी पहली खोज पर चल पड़ा।

इस इलाके में कभी गुन्नु नामक डायन रहती थी, जिसका कुछ कर्ज बकाया था। जब वह कर्ज नहीं चुका सकी तो इलाके के स्थानीय जज़ साहब ने उसकी कुर्की-जब्ती की सजा सुनाई। उसके पास संपत्ति के नाम पर बस एक बर्तन था। जब वह भी जब्त हो गया तो कुछ दिनों में गुन्नु की मृत्यु हो गई। उसकी अंत्येष्टि में जज़ भी गए, पर जब वह लौट रहे थे तो गुम हो गए। अगले दिन उनके लाश के टुकड़े-टुकड़े मिले। लोगों को शक हुआ कि गुन्नु डायन की ही करामात होगी, और उसकी कब्र खोदी गयी तो वो गायब थी। यह तो तय था कि गुन्नु डायन लौट आई है, पर वो किसी को गाँव में नजर नहीं आती।

कुछ दिनों में जज़ के पत्नी की भी संदेहास्पद मृत्यु हो गयी। गाँव के बच्चे गायब होने लगे, औरतें पागल होने लगी, और कई लोग अजीबो-गरीब तरीके से मरने लगे। ऐसी हालात में गाँव के लोग अपने पादरी के पास गए। आईसलैंड के पादरियों का तंत्र-ज्ञान विश्व में नामचीन आज भी है। पर गुन्नु डायन पर उनके भी तंत्र कमजोर पड़ रहे थे। आखिर उन्होंने एक अलग तरह की तरकीब अपनायी। उन्होंने एक ऊन का गोला लेकर उबलते कीचड़ों में डाल दिया और उसका एक सिरा गुन्नु के हाथ में दे दिया। गुन्नु वहीं जाकर फँस गयी, और आज भी वहीं जीवित है। पर उसके बाद अप्रिय घटनाएँ गाँव में बंद हो गयी।

मैं जब उस इलाके में पहुँचा तो वहाँ कोई न था, और जमीन से गरम धुआँ निकल रहा था। कुछ गंधक सी दुर्गंध और उबलता पानी। यह जरूर कोई गरम जल-प्रपात ही था, और किसी प्रेत की आशंका न थी। पर रूक कर यूँ ही आस-पास घूमने लगा। उस इलाके में कई छिद्रों से यह धुआँ निकल रहा था, और वो धुएँ मिल कर भिन्न-भिन्न आकृतियाँ बना रहे थे। साँझ की गुलाबी लाल रोशनी में यह वाकई किसी युवती सी नजर आ सकती है, जो जमीन से निकलते धुएँ के बीच बैठी है। यह चित्र उतारना कठिन है, पर यह कहना आसान है कि गुन्नु डायन मुझे देख रही थी और मैं उसे।

जैसे ही मैं गाड़ी की ओर लौटने लगा, पीछे से ब्रिटिश अंग्रेजी में किसी महिला ने आवाज दी। एक गोरी-चिट्टी अंग्रेज महिला पता नहीं कहाँ से और कब इस वीराने में आ गई? और कैसे आ गई? आस-पास तो बस एक मेरी ही गाड़ी नजर आ रही है। और यहाँ पहुँचने का रास्ता भी निकटतम शहर से लंबा और दुर्गम है। पर उस महिला को गौर से देखा तो वो शायद पहले भी वीराने में चलते नजर आई थी जब मैं एयरपोर्ट से ग्रिन्डाविक आ रहा था। तब भी मैं चौंका था कि यह अकेली महिला इस सुनसान में कहाँ चले जा रही है? और अब वो यहाँ भी? जाहिर है, चल कर ही आई होगी, पर इतना चलना मानव-क्षमता के हिसाब से कठिन है।

“आप मुझे लिफ़्ट दे सकते हैं?”

“हाँ! क्यों नहीं? पर आपको जाना कहाँ है?”

“रेक्ज़ाविक की ओर एक गाँव।”

“मैं तो उल्टी दिशा में जा रहा हूँ। लेकिन उस दोराहे तक छोड़ सकता हूँ जहाँ से हमारे रास्ते अलग होंगे।”

“बड़ी मेहरबानी होगी। आप वहीं छोड़ दें।”

“वहाँ से आपका गाँव कितना दूर होगा?”

“मेरा गाँव तो इंग्लैंड में है। पर यह गाँव तकरीबन चालीस कि.मी.।”

“यह तो लंबी दूरी है और अब शाम भी हो गयी है।”

“हाँ! लेकिन मैं चली जाऊँगीं। और कोई न कोई आगे भी लिफ़्ट दे देगा।”

एक सुंदर अंग्रेज़ लड़की यूँ ही 'हिच-हाइक' के भरोसे सैकड़ों कि.मी. का सफर अकेले किये जा रही है? सोचा कि उन्हें उनके गाँव तक छोड़ दूँ। लेकिन लगा कि उनको उनके हाल पर छोड़ना ही बेहतर होगा। उनके लिए रोमांच ही यही था और आखिर यह गुन्नु डायन का इलाका भी तो है। न जाने किस रूप में मिल जाए।

प्रेतों और डायनों की बात तो मिथक भी हो सकती है, पर आईसलैंड में 'हिच-हाइक' एक संस्कृति ही है। सड़क के किनारे सुनसान में जमीन पर बैठे संभ्रांत मनुष्य बैठे मिल सकते हैं। आखिर इस द्वीप की जनसंख्या ही कुल मिला कर लगभग तीन लाख है, तो लोग एक-दूसरे को जानते भी हैं। और गाड़ी रोक कर उन्हें कुछ रास्ते तक तो जरूर ही छोड़ देते हैं। किसी को कोई जल्दबाजी भी नहीं। लोग घंटों किसी गाड़ी का इंतजार करते बैठे मिल सकते हैं। उनके जीवन से वो तमाम आठ-घंटे वाले नियमित जॉब गायब हैं। यह आज भी जंगली जीवन ही जी रहे हैं, जहाँ वो प्रकृति के भरोसे ही जीते हैं। न कोई ट्रेन, न नियमित बस, और न ही हवाई-जहाज। गाड़ियाँ सबके पास जरूर हैं, पर 'हिच-हाइक' करना अधिक रोचक है। ताज्जुब है कि महिलाएँ भी वीरान इलाकों में बिना किसी भय के किसी अजनबी गाड़ी का इंतजार करती हैं। यही अलौकिक प्रजाति किसी प्रेत का अहसास कराती है। साधारण मनुष्य वीराने में लूट-बलात्कार से तो जरूर डरेंगें।

मृत्यु के अखबार

अंग्रेज प्रेतिन से मुलाकात के बाद अगले सफर पर निकला।

जादूगरों और ‘विचक्राफ़्ट’ का गढ़ है आईसलैंड का उत्तरी-पश्चिमी इलाका। और प्रेत बसते हैं मूलत: दक्षिण और केंद्र में। दोनों के मध्य लगभग दो सौ कि.मी. का कठिन रास्ता है। शायद यह दूरी बनाए रहना आवश्यक रहा हो। यह बातें तो खैर चार सौ वर्ष पुरानी है। पर उनकी विरासत अब भी बची है, और प्रेतों का भी अस्तित्व उनके लिए बचा है जो विश्वास रखते हैं। मेरा विश्वास तो गुन्नु प्रेत से ही बनना शुरू हुआ, पर अब सोचा कि इन जादूगरों से मिल कर पक्का कर लूँ।

बर्फीले आईसलैंड में सबसे मुश्किल है यात्रा करना। साधारण ‘टू-व्हील’ ड्राईव गाड़ियाँ किसी काम की नहीं। यह ‘आईस’-लैंड है, जहाँ मखमली बर्फ नहीं, जमी चिकनी ‘आईस’ होती है। इन पर गाड़ी चलाना खतरे से खाली नहीं। काफी सोच-विचार कर मैंने धातु के कील लगे हुए मोटे टायर से लैस होन्डा की ‘सी.आर.-वी.’ गाड़ी भाड़े पर ली थी। और उसे दो-तीन दफे सड़क से उतार गीले बर्फ और पथरीले रास्ते पर उतार कर जांच करने लगा। ताकि किसी तूफान में गाड़ी फिसल कर घाटियों में जा गिरे, तो मैं इन पत्थरों से चला कर वापस सड़क पर ला सकूँ। यह जांच सफल रही, और बिना किसी दुर्घटना के मेरी गाड़ी पथरीली रास्तों पर चलने में कामयाब रही। सब ठोक-बजा कर आखिर इस जादू की दुनिया की यात्रा प्रारंभ की।

यह ‘होल्माविक’ का इलाका दरअसल तीन तरफ समुद्र से घिरा एक प्रायद्वीप है, जिसकी तटीय सीमा मानचित्र पर खजूर के पत्तों की तरह कटी-कटी दिखती है। और इन रास्तों पर जब बर्फ जमी हो, तो थोड़ी सी भी फिसलन गाड़ी को सीधे समुद्र में उतार सकती है। पर यह तो तब होगा, जब मैं तट तक पहुँचूंगा। आईसलैंड की एक दूसरी समस्या भी तो है!

आईसलैंड एक सेकंडों में बदलता देश है। अभी जो सड़क दिख रही है, वो अगले पल नहीं दिखेगी। और यह सब ‘लाइव’ नजर आता है। एक तरफ गाड़ी के जी.पी.एस. पर मानचित्र और रास्ता, और दूसरी तरफ आईसलैंड का ‘लाइव’ सड़क-मानचित्र जो बदलता रहता है। आधे सफर जाकर पता लगा कि यह रास्ता भीषण तूफान की वजह से बंद हो गया, और मुझे वापस लौटना होगा। वापस तो लौटना ही होगा, शुरू से अब एक दूसरे रास्ते पर जाना होगा, जो दोगुना लंबा और अत्यंत ही कठिन सड़क है। पर पता नहीं, कोई शक्ति मुझे जैसे आकर्षित कर रही थी, और मैं चल पड़ा।

मैं भिन्न-भिन्न देशों में रहा हूँ। इंग्लैंड का मौसम भी हर पल बदलता है। पर यह हाल नहीं होता कि मुख्य सड़कें अचानक बंद हो जाएँ। आईसलैंड की सड़कें कभी भी बंद हो

सकती हैं। कभी बर्फीली आंधी से, कभी चक्रवात से, कभी भू-स्खलन से, कभी भूकंप से, कभी ज्वालामुखी फटने से, कभी यूँ ही जमीन के बीच दरार आ जाने से, कभी मोटी चिकनी बर्फ के जम जाने से या कभी तमाम गाड़ियों के सिलसिलेवार दुर्घटना से। और यह रोज ही हर घंटे होता है। यहाँ के लोगों के लिए यह रोजमर्रा की बात है कि सौ कि.मी. का सफर कर आए, आखिरी दस कि.मी. रह गये, फिर भी वापस लौटना पड़ा। हद तो यह है कि वो हंसते हुए लौट जाते हैं, और दुबारा दूसरे रास्ते से सफर शुरू करते हैं। वो रास्ता भी बंद हो गया, तो रूक गए। अगली खबर का इंतजार करते रहे।

और पेट्रोल-डीज़ल? गाड़ी पानी पर तो चलेगी नहीं।

मुसीबत यह थी कि इस वीराने में न इंसान नजर आते हैं, न दुकानें, न पेट्रोल पंप। और फिर कभी यह तीनों अचानक नजर भी आ जाते हैं। बीस-बीस कि.मी. तक एक इंसान नहीं, और अचानक कुछ लाल रंग के डब्बे नजर आते हैं, जिन में तेल भरा है। कार्ड डालो, तेल निकालो, आगे भरो। कहीं सुनसान में अचानक एक घर में कोई महिला एक छोटी दुकान खोले मिल जाती हैं। मीलों तक कोई नहीं, बस यह दुकान। और किसी पहाड़ पर कभी एक झोपड़ी नजर आ जाती है। आप सोचते हैं कि वहाँ कोई गाँव होगा, पर कुछ नहीं होता। बस एक घर, और उसमें मुमकिन है कि एक महिला अकेली रहती हों। वो चाहें तो कहीं ऐसी जगह भी बस सकती हैं, जहाँ कुछ घर हों। पर नहीं। उन्हें अकेले ही जीना है। अपनी छोटी सी आत्म-निर्भर दुनिया में। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं, कि वो एक मशहूर 'क्राईम-फिक्शन' लेखिका हों। आईसलैंड के दस प्रतिशत लोग कोई न कोई किताब लिख चुके हैं। यह मुझे पंजाब की याद दिलाता हैं, जहाँ कहते हैं कि हर दसवें घर से एक 'म्यूज़िक सी.डी.' निकली है। यहाँ क्राइम-फिक्शन का इतना शौक है कि आईसलैंड की प्रधानमंत्री भी पहले 'क्राईम-फिक्शन' ही लिखती थीं। जिस देश में 'क्राइम' नहीं होता, वहाँ 'क्राईम-फिक्शन' खूब बिकते हैं। जहाँ प्रेम नहीं होता, वहाँ प्रेम कथाएँ। जहाँ यथार्थ खत्म होता है, गल्प की उत्पत्ति होती है। आईसलैंड के लोग अपने जीवन-काल में विश्व के अधिकतम किताब पढ़ जाते हैं, अधिकतम फ़िल्में देख लेते हैं, और अधिकतम कोका-कोला पी जाते हैं। इस छोटे से देश के यह विचित्र कारनामें चौंकाते हैं।

पर क्या यहाँ के लोग गुमनामी में ही मर जाते हैं? अकेली जिंदगी बिता कर। यहाँ आम है कि मां-बाप भी बच्चों से एक उम्र के बाद बातें न के बराबर करते हैं। वो अपना एकांत ढूँढते हैं। तो उन्हें मरने के बाद भला कौन याद करेगा? यह बात सोच ही रहा था, तो यहाँ का अखबार हाथ आ गया। अखबार में ऐसी बात मिली, जो मेरी सोच के विपरीत थी। लगभग सात पृष्ठ तक बस मृत्यु-संदेश ही छपे थे। खूबसूरत संदेश। प्रेम भरे भावनात्मक संदेश। मजाकिया संदेश। इतने रोचक मृत्यु-संदेश मैंने आज तक नहीं पढ़े। गर आप आईसलैंड के अखबारों का सही लुत्फ उठाना चाहते हैं, तो मृत्यु-संदेश जरूर पढ़ें।

आईसलैंड का हर व्यक्ति जीवन में एक बार अखबार में जरूर आता है। जब वो मरता है। और यह इनकी संस्कृति का हिस्सा है। मृत्यु-संदेश अखबार की तरफ से मुफ्त है। लोग सौ साल जीकर जब आखिर मरते हैं, तो उनके परिवार के लोग, उनके मित्र, सभी अपनी यादों को संजोते हैं। लेखकों के देश में संदेश लिखे तो बेहतरीन जाएँगे ही।

आईसलैंड का हर व्यक्ति और कुछ पढ़े या न पढ़े, इन मृत्यु-संदेशों में किसी को जरूर ढूँढते हैं। गौरतलब यह भी है कि इस छोटे से देश में हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का रक्त-संबंधी है। दूर के ही सही, पर सब एक दूसरे के रिश्तेदार हैं। बाकायदा एक ऐप्प और वेबसाइट है, जिस पर कोई भी यह पता कर सकता है कि वो दूसरे व्यक्ति से कैसे जुड़ा है। सबके उपनाम तो एक से हैं ही।

वो अकेले अपने कमरे में बैठ इन सभी रिश्तेदारों को श्रद्धांजलि देते हैं। इसलिए कोई यहाँ गुमनाम तो नहीं ही मरता। पर क्या इस मृत्यु-संदेश के पीछे भी यही विश्वास है कि वो प्रेत रूप में जीवित रहेंगें? उनकी मृत्यु अंत नहीं है? यह तो 'होल्माविक' पहुँच कर ही पता लगेगा। हाँ! यह जरूर पता लगा कि जब वाईकिंग थे, तो यहाँ लकड़ियों पर शव-दाह की परंपरा थी। कभी-कभार उनके साथ उस नाव को जला देते, जिस पर वो आए थे। समुद्री श्मशान में जलते नाव। और उसमें जलता पार्थिव शरीर। ऐसा समुद्री श्मशान भी पहली बार ही सुना। इनके प्रेत भी कहीं इन्हीं नावों पर घूमते होंगे।

होल्माविक के कौवे

जैसे-जैसे मेरी गाड़ी होल्माविक की ओर बढ़ रही थी, मौसम साफ नजर आ रहा था। पर सड़क अब अधिक सुनसान दिख रही थी। अब तो पेड़-पौधे भी गायब हो गए। आईसलैंड में न जंगल हैं, न मच्छर, न कुछ खास जमीनी जीव-जंतु। नजर आते हैं तो कुछ कौवे। कुछ ही नहीं, बहुत सारे कौवे। और इन कौवों का रिश्ता भी प्रेत से ही है। सोचिए, जिस द्वीप पर भला कोई जीव-जन्तु न टिक सका, वहाँ कौवे कैसे बच गए? कौवे यहाँ उन दिनों से हैं, जब यहाँ मनुष्य भी बसने नहीं शुरू हुए थे। जब आईसलैंड में नॉर्वे से फ़्लोकी नामक पहले व्यक्ति आए थे, तो उन्हें कौवों ने ही रास्ता दिखाया था। यहाँ के लोग मानते हैं कि कौवा सबसे बुद्धिमान जीव है, जिसकी बुद्धि एक किशोर बालक के बराबर होती है। कौवों में भविष्य देखने की क्षमता होती है, और वो चलते-फिरते मौसम-विभाग हैं। उन्हें खबर होती है कि कब तूफान आएगा, कब ज्वालामुखी फटेगी और कब भूकंप आएगा। आज भी आईसलैंड के लोग किसी आपदा के लिए मौसम-विभाग को कम और कौवों की काँव-काँव को अधिक महत्व देते हैं। यहाँ तक कि जब किसी वृद्ध की मृत्यु आने वाली होती है, एक कौवा उसके मुँडेर पर आकर घंटों शांत बैठ जाता है। यह संकेत है कि मृत्यु निकट है और वो खुशी-खुशी इस सत्य को स्वीकार कर लेता है। इन बातों से मुझे एडगर एलन पो की 'रैवेन' कविता याद आती है।

कौवा आईसलैंड में पूज्य भी है। यहाँ के देवता 'ओडिन' के दो वफादार कौवे थे- हुगिन्न और मुनिन्न। यही कौवे उनके पास दुनिया की खबरें लाते थे, जिसका ओडिन हल ढूँढते थे। यहाँ तक कि आज आईसलैंड के सबसे लोकप्रिय नाम का अर्थ ही कौवा है। यानी कौवा नाम रखना शुभ माना जाता है। मैंने पता किया कि आखिर इस देश में कुल कौवे हैं कितने? तो पता लगा कि लगभग तीन हजार जोड़े कौवे हैं। इतने तो बैंगलूर के विज्ञान संस्थान के प्रांगण में ही हैं। ये और बात है कि उनका कोई महत्व नहीं। और काला कौवा भारत में अशुभ भी है। कौवा नाम तो खैर भारत में कोई नहीं ही रखता। गर कौवा योनि में पुनर्जन्म हो, तो आईसलैंड में ही हो। भारत में तो दुत्कारे ही जाएँगे।

जब रास्ते में कौवे दिखने शुरू हुए, तो अंदेशा हुआ कि कुछ-न-कुछ अनहोनी होने वाली है। पर कैसी अनहोनी? यह कुछ आगे जाकर ही पता लगा। कुछ शुरूआती चेतावनी तो इस रूप में आई कि गाड़ी अचानक खिसक कर सड़क से उतरने लगी, पर वो शायद मैंने हीं जमी बर्फ को अनदेखा कर दिया। कुछ आगे जाकर मैं बर्फीली तूफान में घिर गया। अब न आगे जाना मुमकिन था, न पीछे। बर्फ से सड़क और आस-पास के पत्थरों में भेद खत्म हो गया था। यह समझना कठिन था कि मैं सड़क पर हूँ, या नीचे उतर गया हूँ। हालाँकि हर पचास मीटर पर सड़क पर कुछ पीले पोल गाड़ रखे थे, लेकिन उन पर भी बर्फ जम गई थी। अभी सौ कि.मी. का सफर बचा था, और इस तूफान से होकर ही गुजरना था। अब यह आईसलैंड के सड़क-मानचित्र पर भी आ चुका था कि आगे का

रास्ता खतरनाक है और कभी भी बंद हो सकता है।

तूफान की गति देखी तो 60 कि.मी. प्रति घंटा पर चल रही थी। और मेरी गाड़ी अस्सी-नब्बे की गति पर। गर भौतिकी लगाएँ, तो तूफान इस गाड़ी को सौ से अधिक गति से फेंक सकता है। पर गाड़ी का अपना भी वजन होता है, और मैं तूफान की दिशा से गाड़ी की दिशा का साम्य बिठाने में लगा था। आँखों के सामने कुछ नहीं, और गाड़ी को झकझोरता तूफान। मैं मनाने लगा कि गर मनुष्य नहीं तो प्रेत ही आस-पास दिख जाएँ और कुछ राहत मिले। इस बर्फीले वीराने में आकृतियाँ तो नजर आ रहीं थी, जो न मनुष्य थे, न जानवर, न वृक्ष। वो हवा और बर्फ से बनी तेज विचरती आकृतियाँ थीं, या शायद वो अदृश्य जीव थे। हुल्दुफोक!

उस वक्त तूफान में रुकने के सिवा कोई विकल्प नहीं था, पर रुकने की कोई जगह नहीं थी, तो सड़क पर ही गाड़ी लगाकर एक ठुमरी सुनने लगा। ठुमरी पूरब का 'ब्लूज़' संगीत ही तो है, जिसमें विरह भी है और प्रेम भी। क्या इन प्रेतों को भी ठुमरी पसंद आएगी? मेरा मानना है कि प्रेतों को हर संगीत ही पसंद है, बस सही वक्त और सही मूड का हो। और यह वक्त ठुमरी का ही ठीक लगा। तकरीबन आधे घंटे बाद एक बड़ी आर्कटिक जीप इस तूफान को चीरती पास से गुजर गई। मुझे कुछ नजर भी नहीं आ रहा, और यह कितने आराम से निकल गई? जरूर कोई प्रेत ही चला रहा होगा।

बड़े-बड़े ट्रक के टायर जब किसी जीप में लगा दी जाए, तो वो दिखती विचित्र है, पर उसमें इतनी शक्ति होती है कि पथरीले रास्तों, मोटे बर्फ और तूफान को चीरती निकल जाए। जैसे भारत की घरेलू कार मारूति है, वैसे ही आईसलैंड में लैंड-क्रूज़र की आर्कटिक ट्रक। टायर भी विशाल, और हेडलाइट भी बुलंद। जल, थल और वायु, सब पर नियंत्रण। इस गाड़ी के बिना आईसलैंड में रहना नामुमकिन है। मैंने अठारह-उन्नीस वर्ष की दुबली-पतली युवतियों को भी यह जीप चलाते देखा। इसमें कोई नयी बात नहीं। पंजाब की युवतियाँ भी खूब ट्रैक्टर खेतों में उतार चलाती हैं। यह जरूर है कि ट्रैक्टर से खेती-बाड़ी हो जाती है, यहाँ तो सड़क पर चलने के लिए भी यही जीप चाहिए। और यह जीप तो दुनिया की सबसे मंहगी गाड़ियों में है। जिस भारतीय के पास 'हम्मर' या इस तरह की 'लैंड-क्रूज़र' हो, वो बिरला धन्ना सेठ ही होता है। और यहाँ तो गाँव-गाँव में ऐसे सेठ बसते हैं। भला मछली मार कर और पर्यटकों से कोई कितना कमा लेगा? यहाँ से कहीं अधिक पर्यटक तो आगरा, बनारस और केरल में मिल जाएँगे। वहाँ तो सबके पास इतनी संपत्ति नहीं कि पचास लाख की गाड़ी घुमाए। भला धन का स्रोत क्या है? इस द्वीप पर कोई खजाना तो नहीं?

खैर, इस आर्कटिक गाड़ी के गुजरने से कुछ हिम्मत आई, और मैं भी आगे की सफर पर चल पड़ा। तूफानी अंधेरे में ही अंदाजे लगाकर गाड़ी चलाने लगा, और मानचित्र देख यह पक्का करता रहा कि सड़क सीधी ही जाएगी। अचानक मुड़ गई, तो मैं रसातल में जा गिरूँगा। पर अब गाड़ियों की जी.पी.एस., कैमरे और सेंसर इतने कुशल होते हैं कि यूँ ही टकराने या गिरने न दें। एक पत्थर भी करीब आ जाए तो अपना बीप-क्रंदन शुरू कर दें, और आप भी थक-हार कर गाड़ी रोक दें।

तूफान तो थमने का नाम न ले रहा था, पर मैं भी अब वाईकिंग बन गया था, और गाड़ी

की गति भी तेज हो गई थी। बर्फ पर गाड़ी दौड़ा दी। अंधेरे की फिक्र न की। और इस सुनसान रास्ते पर इस विश्वास से चलने लगा कि जादू-नगरी पहुँच कर सब ठीक हो जाएगा।

आखिर होल्माविक पहुँच ही गया। यह तो शहर ही भुतहा था।

समुद्री खाड़ी के किनारे, एक गाँव जहाँ भीषण बर्फीला तूफान और अंधेरा था, पर इक्के-दुक्के लोग इसी तूफान में आराम से टहल रहे थे। ये सर से पैर तक सफेद जीव मनुष्य नहीं लगते। ये प्रेत ही हैं, या फिर कोई जादूगर या तांत्रिक हैं जिन्होंने इस तूफान पर काबू पा लिया। गाड़ी हिल रही है, खाड़ी में खड़े जहाज हिल रहे हैं, बिलबोर्ड हिल रहे हैं, पर वो नहीं हिल रहे। इतनी शक्ति मानवीय तो नहीं हो सकती। यहीं एक छोटे से दोमंजिले झोपड़े में तांत्रिक इतिहास का पता मिलता है, जिसका नाम संग्रहालय रख दिया है। पर क्या इस तूफान में यह संग्रहालय खुला होगा?

एक तो इसे संग्रहालय कहना ठीक न होगा। संग्रहालय का अर्थ है एक शानदार रोमन या ब्रिटिश वास्तुकला से बनी इमारत, जिसमें कई हॉल और गलियारे हों, और तमाम शीशे के डब्बों में बंद ऐतिहासिक वस्तु हों। यह तो कोई बर्गर-पिज्जा की दुकान सरीखी थी, जहाँ एक शीशे के दरवाजे पर साधारण फॉन्ट में संग्रहालय लिख रखा था। अंदर एक वृद्ध महिला बैठी थी, और उसके साथ एक बिल्ली। अंदर पहुँचते ही तूफान जैसे थम गया। यह स्कैंडिनैविया के हर घर की ख़ासियत है कि बाहर चाहे कितना भी बुरा मौसम हो, अंदर शांति ही होती है। इन लकड़ी के बने घरों में पता नहीं आखिर क्या तकनीक लगाते हैं कि शोर-गुल और हलचल खत्म ही हो जाती है। गर कोई सब्जी बेचने वाली मुहल्ले से गुजर भी जाए तो आवाज ही न पहुँचे। ऐसा नहीं कि आवाज बिल्कुल नहीं आती, पर कम जरूर आती है। हवा तो खैर नहीं ही आती।

“आप लंबी छुट्टी पर आए हैं?” उस वृद्धा ने पूछा।

“नहीं! गर काम हो गया, तो कल निकल लूँगा।”

“कल तो आप नहीं निकल पाएंगे। शायद परसों भी नहीं। तीन दिन बाद शायद निकल पाएँ।”

“क्यों?”

“यह तूफान अभी नहीं थमेगा और शाम से सभी रास्ते बंद हो जाएंगे।”

“पर, मौसम विभाग की वेबसाइट...”

“जनाब आप एक तांत्रिक-घर में खड़े हैं, और मौसम विभाग की सुन रहे हैं?”

“तो आप क्या भविष्य देख सकती हैं?”

“भविष्य तो कोई नहीं देख सकता, पर उमर और अनुभव के साथ अंदाजे लगाने सीख गयी हूँ।”

“अंदाजा है, फिर रुकूंगा। जब तक मौसम विभाग न कह दे।”

“रुकने के लिए किसने रोका है? आप तीन दिन आराम से रुकें। पर मेरे अंदाजे को ब्रह्मसत्य ही मानें। गर तूफान से बचना है और जल्दी हो, तो बस वापस निकल लें।”

यह बात उस महिला ने यूँ आँखों में आँखें डाल कर अपनी सशक्त आवाज में कही कि मेरे लिए कुछ और पूछना मुनासिब न था। मुझे यकीन हो गया कि यह तूफान नहीं थमेगा। और मुझे वापस भागना ही होगा।

लेकिन कुछ जादूगरी तो सीख कर जाऊँगा ही। मसलन, अदृश्य होना।

अदृश्य होना, जिसे तंत्र परंपरा में अंतर्ध्यान कहते हैं। इसका उल्लेख लगभग विश्व की सभी तंत्र पद्धतियों में है। बौद्ध या गुह्यसमाजी तंत्रों में यह प्राथमिक तंत्र है, जिससे शुरूआत की जा सकती है। पर उस मिस्टर इंडिया वाली घड़ी का आखिर सूत्र क्या है?

तंत्र के लिए आवश्यक है - यंत्र। यानी वो आकृतियाँ जिससे कि एक खास उद्देश्य की पूर्ति हो। अदृश्य होने के लिए भी एक यंत्र है, जिसे मैं इस किताब से दूर ही रखता हूँ। क्या पता किताब ही अदृश्य हो जाए? इस बात पर विश्वास शायद न हो कि उस यंत्र की मैंने दो फ़ोटो ली, और उसकी कॉपी बनाकर रखी, और सभी अदृश्य हो गए। वो अब मुझे कहीं नहीं मिलते। उसकी हाथ से बनाई कॉपी मिलती है, पर वो मूल तस्वीर गायब है। मूल तस्वीर उस पन्ने की थी, जो डायनों ने अपने हाथों से वर्षों पहले उकेरी थी। यंत्र के अतिरिक्त विधि और मंत्र भी आवश्यक है। पर वो ऐसी भाषा में है, जिसे शुद्ध उच्चारण करना अब किसी के लिए भी असंभव है।

“क्या आप इन कागजों को पढ़ सकती हैं?”

“नहीं पढ़ सकती। पर कुछ लोग हैं जो पढ़ सकते हैं।”

“और क्या वो अदृश्य हो जाते हैं?”

“हाँ! जो यह कला जानते हैं, वो अदृश्य भी होते हैं।”

“आपने भी कुछ तो सीखा ही होगा?”

“तभी तो कह रही हूँ कि गाँव छोड़ कर जल्दी निकल जाओ। नहीं तो लौटना कठिन होगा। और आपकी तो फ़्लाइट भी इतवार को है।”

“हाँ! पर आपको कैसे पता?”

“आप ही ने बताया होगा।”

“बताया तो शायद नहीं। या बता भी दिया हो। आपकी जानकारी ठीक ही है।”

मेरी याद्दाश्त कमजोर नहीं। उस महिला को मैंने अपनी फ़्लाइट के विषय में कुछ नहीं कहा था। पर यह भी सोचता हूँ कि तूफानी रस्तों में थक कर शायद कुछ बातें भूल गया।

क्या पता बता दिया हो! और क्या फर्क पड़ता है? अक्सर सैलानी वीकेंड बिताकर इतवार को ही लौटते होंगे। यह अंदाजा लगाना कठिन तो नहीं।

आईसलैंड के औघड़

यहाँ के तंत्र के जो मूल अंग नजर आते हैं, वो भारतीय तंत्र से मिलते हैं। यहाँ भी 'मारन' है यानी किसी की तंत्र से मृत्यु करवा देना। 'आकर्षण' और वशीकरण' तो इनका महत्वपूर्ण अंग है ही। 'स्तंभन' यानी किसी को रोक देना। इसके अतिरिक्त 'संतिका' यानी शांति स्थापित करना भी है। 'उच्चाटन' यानी घर नष्ट कर देने के भी तंत्र हैं। इनके नाम और तरीके भिन्न-भिन्न हैं। पर तंत्र काफी मिलता-जुलता तो है ही।

जितने भी यंत्र हैं, वो अक्सर किसी जानवर के छाल या लकड़ी पर खून से उकेरे जाते हैं।

जैसे अगर किसी स्त्री को वश में करना हो तो सूअर की छाल पर अपने स्तन के निप्पल से रक्त निकाल कर उकेरा जाए। और फिर उस यंत्र को स्त्री के बिस्तर के नीचे रख दिया जाए। वो स्त्री वश में होगी। यह तो उस स्त्री के लिए है, जो वश में नहीं। अगर वशीकृत स्त्री को स्थायी तौर पर पक्का करना हो तो 'कॉमन हाउसलीक्स' पौधे का रस लिंग पर लगा कर यौन-संबंध करना होगा। फिर वो किसी और पुरूष से संबंध नहीं बनाएगी। यह बातें अजीब लग सकती हैं, पर आज भी 'कॉमन हाउसलीक्स' के पौधे खूब बिकते हैं। और यह तय है कि यहाँ के कुछ बाशिंदे प्रयोग भी करते होंगे।

इस तंत्र का अगर भारतीय समकक्ष ढूँढें तो कौल परंपरा के 'योगिनी' तंत्र से कुछ साम्य संभव है। जहाँ योगिनी तंत्र में षट्कोण का अधिक उपयोग है, आईसलैंड के तंत्र में चतुष्कोण का। मारण के लिए योगिनी तंत्र में अस्थि-माला पहन कर चांदी के साथ श्मशान में बैठ कर पूजन करते हैं। शत्रु का पुतला एक लौह-पात्र में रख कर रात्रि को तंत्र करते हैं। आईसलैंड में मारण आखिर कैसा है?

आईसलैंड में मारण को 'मैलेफ़िसियम' कहते हैं। इसकी शक्ति आईसलैंड के कई डायनों में थी कि काला जादू से किसी की हत्या कर दे। पर वो कैसे करती थी, यह कम लोगों को पता है। मुझे एक कागज मिला, जिसमें कुछ यंत्र और मंत्र लिखे थे। पर उसकी चर्चा किताब में करना ठीक न होगा। क्या पता कि यह काम करते हों, और कोई सचमुच इसका उपयोग कर ले। ऐसी डायनों का पता लगते ही आईसलैंड में गिरफ्तार कर फांसी दे दी जाती। हजारों डायनों को नॉर्वे और आईसलैंड में इस इल्जाम में फांसी दे दी। एक वैज्ञानिक नजरिए से यह सब गलत नजर आता है, पर मेरे लिए कुछ पक्का कहना कठिन है।

"यह कैसे पता लगता होगा कि फलाँ डायन है?"

"उसकी हरकतों से। और डायन के साथ उसके सहयोगी भूत-प्रेत भी होते थे।"

"हाँ! पर भूत-प्रेत तो बस वो ही देख सकती थी?"

“भूत-प्रेत कोई भी देख सकता है, गर उसके पास यंत्र हो।”

“भूत-प्रेत देखने का यंत्र?”

“देखने का भी, और उनसे रक्षा का भी।”

एक लकड़ी के तख्ते पर उकेरे तमाम यंत्र जिन्हें हाथ में रख कर भूत देखा जा सकता है। पर अगर वो यंत्र हाथ में लेते ही भूत-प्रेत नजर आने लगे तो क्या होगा? कोई रक्षण-मंत्र तो हो? और वो भी आईसलैंड के भूत संस्कृत मंत्र तो समझेंगे नहीं। इनको इनकी भाषा के मंत्र में ही समझाना होगा। मैंने वो यंत्र लेकर घूमने का इरादा त्याग दिया। हालांकि मंत्र का एक ‘शॉर्ट-कट’ भी है। काले कुत्ते का पित्ताशय और मछली एक पात्र में जलाकर साथ रखना होगा। मछली तो खैर मिल जाएगी, पर काले कुत्ते का पित्ताशय दुर्लभ है।

दो यंत्र और मिले, जिन्हें अगर जूते में लगाकर कुश्ती लड़ी जाए तो कभी हार नहीं सकते। उन यंत्रों के साथ एक मंत्र भी पढ़ना होगा। पर कुश्ती अब कौन लड़ेगा? यह भी काम की नहीं।

मैं यूँ ही खड़े होकर एक मंत्र पढ़ने लगा, जिसका अंग्रेज़ी अनुवाद भी उपलब्ध था। इस मंत्र के पढ़ते ही कब्र से मुर्दे निकल कर चलने लगते। वहीं पास एक मुर्दे को कब्र से निकलते मूर्ति रूप में भी लगा रखा था। मैं उस मुर्दे को देखता पढ़ने लगा,

“गाढ़ा रक्त। थके योद्धा।
सदियों के संघर्ष से देश बना।
प्रलय-नरसंहार कई,
धन-हानि, सब मरे विक्षिप्त।
जिस विनाश से भयाक्रांत मनुज,
तूफ़ान से तूफ़ान तक, पीड़ित कष्ट से सब,
भीषण विषाद, वीभत्स युद्ध
आसुरी शक्ति से त्रस्त विश्व।”

ऐसे ही एक भूतों की सवारी का भी तंत्र था। भूत की पीठ पर बैठ दुनिया घूमो। यह प्रक्रिया सुलभ है। जिस लाश के भूत की सवारी करनी हो, उसका रक्त और घोड़े का रक्त मिला कर एक घोड़े की खोपड़ी पर यंत्र बना देना है। यंत्र एक मुर्गे के पंख से उकेरना है। बस फिर घोड़े की खोपड़ी हाथ में लेकर भूत के ऊपर चढ़ जाओ, और सवारी करो। यह शक्ति होती, तो क्या बात होती! न गाड़ी, न घोड़ा। न तेल, न युद्ध। प्रेत-यान पर दुनिया घूमो।

एक काग़ज पर बना यंत्र तो मैं साथ ही ले आया। यह अगर जेब में हो तो सौ शत्रुओं से अकेले भिड़ जाओ। इसे कौवे के पित्त से बना कर कौवे के घोंसले में रख दें। जब कौवा अंडा देगा तो यह काग़ज अपार शक्तिशाली बन जाएगा। काग़ज जेब में, और फिर कोई आ जाए लड़ने। हार जाएगा। मैं इसकी प्रतियाँ बनवा कर फौज में बाँटने की सिफारिश करूँगा। जेब में यह पुर्जा रख लो, फिर दुश्मनों की गोलियाँ बेअसर। काश यह सब इतना सुलभ होता। मैं तो इसी विश्वास से चुरा लाया। राहुल सांकृत्यायन तो खच्चर पर

लदवा कर मोटे ग्रंथ ले आए थे। मैं तो बस कुछ काग़ज ही ला पाया।

अक्सर तांत्रिक इस बात पर जोर देते हैं कि गर ज्ञान पूरा न हो, तो तंत्र न करें। अन्यथा इसका कुप्रभाव भी संभव है। आईसलैंड के तांत्रिक पादरी अक्सर मरने से पहले अपने सभी लिखित यंत्र जला देते थे। यह भी वजह थी कि कई यंत्र नहीं मिले। पर ऐसे यंत्रों के चोर भी खूब होते, जो चुरा कर उसे हू-ब-हू उतार लेते। कहते हैं कि उनमें से कई चुराए हुए तंत्र के दुरूपयोग की वजह से स्वयं मर गए। पर एक चुराई हुई डायरी मुझे भी होल्मेविक में रखी मिल गई। उसे पढ़ना मेरे लिए कठिन है, पर काफी कलाकारी के साथ यंत्र बने हैं।

“इस तंत्र का कुछ सदुपयोग भी तो होगा?”

“बिल्कुल! तंत्र सदुपयोग के लिए है। दुरूपयोग के लिए नहीं।”

“मसलन?”

“अब आज की दुनिया में इतनी अशांति है। हम अपने रक्षण के लिए क्या कर सकते हैं? कैसे समझ सकते हैं कि मृत्यु का खतरा है? भविष्य का अंदाजा कैसे लगा सकते हैं?”

“तंत्र से?”

“हाँ! तंत्र से सब संभव है।”

“पर उस वक्त तो आईसलैंड शांत ही होगा। आज भी शांत ही है।”

“डायनों और प्रेतों का खतरा तो आज भी उतना ही है, जितना कल था।”

“देखिए! मुझे इतिहास का नहीं पता। पर अब के समय में मनुष्य ही डायन और प्रेत हैं। कोई तीसरा जीव नहीं।” मैंने हँस कर कहा पर उस हँसी का प्रत्युत्तर नहीं मिला। पर वो आगे कुछ कहने लगीं।

“उस समय और भी कार्य थे। जैसे तूफान का पता करना। भूकंप का अंदेशा लगाना। उस जमाने में कोई मौसम-विभाग नहीं था।”

“हाँ! ज्योतिष तो भारत में भी था।”

“मछुआरे मछली मारने जाते तो उनके पास ऐसे यंत्र थे कि सारी मछलियाँ झुंड में एक साथ आ जाती।”

“यह तो बड़े काम का यंत्र था। आज भी प्रयोग में ला सकते हैं।”

“अब यह कार्य शायद कोई नहीं कर सकता। जो कर सकता है, वो बताना भी नहीं चाहता।”

“आखिरी बार यह तंत्र किसने किया होगा?”

“यह कहना कठिन है कि आखिरी कौन था, क्योंकि तांत्रिक अब भी हैं। पर ‘फ़्रेत्रीरयून’ वाला सबसे लोकप्रिय था।”

“यह अब क्या है?”

“यह बड़ा घृणित तंत्र था। तांत्रिक ‘फार्ट’ (वायुत्याग) कर अपने शत्रु को परेशान करते।”

यह सुनते ही मैं ठहाके मारने लगा कि भला इसमें क्या तंत्र? यह तो प्राकृतिक है। पर वो गंभीर ही रही।

“आप बुरा न मानें, पर यह तो भारत में भी लोग करते हैं। पूरी दुनिया में करते हैं। ये तो उदर-विकृति या प्रकृति है।”

“हाँ! पर ‘फ़्रेत्रीरयून’ कोई प्राकृतिक क्रिया नहीं थी। यह तंत्र था।”

“उनको सजा क्या मिली?”

“उनको जिंदा जला दिया गया।”

“बस इस वायुत्याग के लिए? माफ करिएगा। मेरा मतलब तंत्र के लिए?”

“हाँ! तभी तो लोगों ने यह सब करना छोड़ दिया।”

सच तो यह है कि अब इस औघड़ या तंत्र का जमाना गया। आईसलैंड भी समय के साथ अंग्रेज बन गया। अब वहाँ भी बच्चा-बच्चा अंग्रेजी बोलता है। पर यह तो मैं कह चुका हूँ कि वो आज भी वो भाषा बोलते हैं, जो हजार वर्ष पूर्व बोलते थे। आईसलैंड की देवभाषा!

लिंगों का घर

होल्मेविक में प्रेत दिखे भी, और नहीं भी। तूफान हमें बुरी तरह घेर चुका था, और रूकना भी मुनासिब न था। इस तूफान से भागना ही एक रास्ता था। न सड़क नजर आ रही थी, न साईनबोर्ड, पर अंदाजे से गाड़ी चलाए जा रहा था। जब पचास-साठ कि.मी. आगे निकल आया, तो एक फ़ोन आया कि मेरा कैमरा वहीं छूट गया है।

अब इस तूफान में वापस उस भुतहा जगह लौटने में खतरा तो था ही, पर कैमरा भी कीमती था। आखिर लौटना ही पड़ा। अब जैसे रास्ते समझ आ गए थे। अंधेरे में भी गाड़ी ठीक चल रही थी। जहाँ मोड़ आते, खुद-ब-खुद मुड़ जाती। यह सब कैसे हो रहा था, पता नहीं। पर होल्मेविक मुझे वापस खींच चुका था। वही तांत्रिकों का अड्डा, और वहीं रखा मेरा कैमरा।

कैमरा लेकर जब वापस लौटने लगा, तो मेरे मित्र ने पूछा,

“क्या तुमने वहाँ अपना नंबर छोड़ा था?”

“नहीं। क्यों?”

“फिर उसने तुम्हें फ़ोन कैसे किया?”

यह बात मेरे दिमाग में क्यों नहीं आई? आखिर उस महिला के पास मेरा नंबर कहाँ से मिला? यह सब कुछ अजीब तो है, पर फिलहाल तूफान से निकल लेना ही श्रेयस्कर है।

“देखना, कैमरा तो ठीक है?”

“हाँ! सब ठीक है। बस एक तस्वीर गायब है।”

“कौन सी?”

“उस महिला के साथ जो फ़ोटो ली थी।”

“वो मोबाइल कैमरे से ली थी। वहाँ चेक करो।”

“वहाँ नहीं है। ली तो कैमरे से ही थी। पर जाने दो!”

शायद उसने कैमरे से फ़ोटो डिलीट कर दी हो? इन विदेशियों को अपनी फ़ोटो देने में आपत्ति तो होती ही है। हटा ली होगी। लेकिन ये अक्सर मना कर देते हैं। यूँ किसी का कैमरा लेकर चुपके से डिलीट नहीं करते। संभव है कि फ़ोटो ठीक से खिंच न पाई हो। कई बार गलत बटन दब जाता है। ये कैमरे भी आजकल बड़े आडम्बरी हो गए हैं। पहले

सब सुलभ था। एक याशिका का रॉल वाला कैमरा, एक बटन, और 'क्लिक' की आवाज के साथ फ़ोटो। कैसी फ़ोटो आई, वो रहस्य रहेगा। जब निगेटिव डेवलप होगी, तो पता लगेगा। अब इस डिज़िटल की वजह से अघोड़ी महिला का फ़ोटो गुम हो गया। खैर!

अच्छी बात यह हुई कि जो रास्ते आते वक्त बंद थे, वो अचानक से खुल गए। तूफान भी जाता रहा, और अपनी पुरानी मंजिल आती रही। आज फिर ग्रिंडाविक का ही बसेरा चुना। होल्मेविक में न रूकने का मलाल तो रहा, पर सही सलामत बच कर लौट आया, यह क्या कम है?

रास्ते में सोचा कि रेक्जाविक भी एक चक्कर मार लूँ। रेक्जाविक इकलौता बड़ा शहर है, जहाँ आधा आईसलैंड रहता है। बड़ी-बड़ी इमारतें। शॉपिंग मॉल। और तमाम कंपनियाँ। यह शहर भी यूरोप के बाकी बड़े शहरों सा ही है। बस कुछ जल्दी शुरू और जल्दी खत्म हो जाता है।

यहीं रेक्जाविक में एक अद्भुत जगह दिखी, जो दुनिया में शायद ही कहीं हो। लिंगों का संग्रहालय। सैकड़ों लिंग काट कर संग्रह कर रखे हैं। ब्लू-व्हेल के विशालकाय लिंग जिसे साबुत रखना कठिन था, तो उसका एक-तिहाई काट कर रखा है, और वो भी हमारे कद से ऊँचा। जिराफ़ का विशाल लिंग। घोड़े का लिंग। इन लिंगों को देख पुरूषों का पौरूष अपनी हीनता पर रोए। पर भला कोई क्यों यह शौक पालेगा कि तमाम पशुओं के लिंग संजो कर रखे?

इसका भी संबंध तंत्र से ही है। लिंग संजोने की आईसलैंड की परंपरा सदियों पुरानी है। खास कर घोड़े का लिंग ये अपने घर में जरूर रखते थे। तंत्र से लिंगों की भी छेड़-छाड़ की जाती थी। नॉर्वे की रानी गुणहिल्द्र का प्रेमी हुत्र जब आईसलैंड जाने लगा तो उन्हें शक हुआ कि उसकी आईसलैंड में प्रेमिका है। उन्होनें कुछ मंत्र पढ़ा जिसकी वजह से हुत्र का अपनी प्रेमिका से यौन-संबंध न बन सका। वो जब भी प्रयत्न करता, उसका लिंग इतना विशाल हो जाता कि संबंध मुमकिन ही नहीं था। यह बात मुझे बर्गन की दीवारों पर भी मिली, जहाँ लिखा था कि इतना बड़ा लिंग हो जाए कि मनुष्य से बड़ा हो, और घोड़े से छोटा। यह संभवत: योगिनी तंत्र में भी मुमकिन हो, पर मुझे जानकारी नहीं।

आईसलैंड में लिंग का शृंगार भी देखने योग्य है। यहाँ एक-एक कंडोम को खूबसूरत गिफ़्ट-रैप कर बेचा जाता है। उन पर संदेश लिखे होते हैं। यह बताने की जरूरत नहीं कि कंडोम एक प्रचलित उपहार है। यह हर उपहार की दुकान से लेकर बेकरी तक कलात्मक पैकेटों में मिलता है। हद तो यह है कि इन कंडोम के पैकेटों पर आईसलैंड की प्रकृति के करिश्मे अंकित हैं। किसी पर ज्वालामुखी, तो किसी पर जल-प्रपात। लिंग का संग्रहालय और कंडोम का उपहारालय। भला क्या अजीब देश है!

रेक्जाविक के इस विचित्र लिंग संग्रहालय से निकला तो रात हो गयी थी, और अभी ग्रिंडाविक का सफर बाकी था। आसमान भी रंग बदल रहा था। हालांकि यह वो विचित्र आसमानी रंग नहीं था, जिसे ऑरोरा बोरियैलिस कहते हैं। पर उसी की छाप थी। काले बादलों के बीच कुछ नीला, कुछ हरा सा आसमान, और चारों ओर बर्फ़ीली सफेदी। इस माहौल में ग्रिंडाविक जाते वक्त लग रहा था कि आज प्रेतों से मुलाकात होकर रहेगी।

प्रेत आखिर होते कैसे हैं? दूर लावा पत्थरों पर कई आकृतियाँ सी तो दिख रही थीं, पर वो जीव थीं या निर्जीव, कहना कठिन है। चंद्रमा की रोशनी जब बर्फीले पत्थरों पर पड़ती हैं, तो आकृतियाँ बन ही जातीं हैं।

ज्वालामुखी और नर्क का द्वार

अगली सुबह हमारा सफर ‘गोल्डन सर्कल’ का था। यह इस वक्त सबसे दुर्गम इलाका था। ऐसे क्षेत्र में जहाँ हाकला और कातला नामक ज्वालामुखी हैं। एक ज्वालामुखी का क्रेटर है, जो अब कई वर्षों से नहीं फटा। इनके मध्य एक ऐसा भूकंप का केंद्र हैं, जहाँ यूरेशिया और अमरीका के ‘टेक्टोनिक प्लेट’ मिलते हैं। मिलते भी हैं, और बिछड़ते भी हैं। वो प्लेट कुछ इंच खिसक जाएँ तो धरती फट जाए। और वो खिसक कर जमीन में कई दरार बना ही चुके हैं, जहाँ ‘गेम ऑफ़ थ्रोन्स’ भी फिल्माई जाती रही। कभी भूकंप तो कभी ज्वालामुखी वाला यह दुर्गम इलाका अब बर्फ से लदा है, और अपनी दुर्गमतम स्थिति में है। पर सोचा कि क्या पता, यहाँ प्रेत मिल जाएँ।

अनुमान है कि आईसलैंड में हर हफ्ते लगभग 500 बार भूकंप आते हैं। जब मैं गाड़ी चला रहा था, तो कई दफे गाड़ी खिसक जाती। अब भूकंप के मध्य गाड़ी मेरी क्या सुनेगी? हफ्ते में 500 बार, यानी घंटे में दो-तीन बार। अब आप अंदाजा लगा लें कि कितने भूकंप झेले होंगे? पर गाड़ी जब भी बिना बात हिलती, तो एक अंदेशा यह भी होता कि कोई शक्ति गाड़ी हिला रही है। जैसे कोई हमारे साथ ही बैठा है, और स्टीयरिंग के साथ छेड़-छाड़ कर रहा है। साल भर में ये भूकंप के मारे ‘टेक्टोनिक प्लेट’ लगभग एक इंच खिसक जाते हैं, और धरती यूँ फट जाती है जैसे सीता आह्वान कर रहीं हों।

जल्द ही हम उस जगह पहुँचने वाले थे, जहाँ हर घंटे धरती कुछ फटती जा रही है। थिंगवेल्लीर। मुकाम पर पहुँचने से कुछ मिनट पहले ही धरती हिलनी शुरू हुई, और मेरे सामने की गाड़ी फिसल कर सड़क से उतर बर्फीले दलदल में धँस गई। मेरी गाड़ी भी हिली, पर मैंने गति धीमी कर दी, और बच गया। वरना इस वीराने में पता नहीं कब तक दलदल में धँसा रहता।

थिंगवेल्लीर में धरती फटनी तो सदियों पहले शुरू हुई, पर यह आईसलैंड का केंद्र भी बना जहाँ विश्व की सबसे प्राचीन संसदों में एक आईसलैंड की संसद बैठती थी। उन दिनों आईसलैंड के भिन्न-भिन्न इलाके के सरदार यहाँ आकर संसद लगाते थे और द्वीप के महत्वपूर्ण फैसले लेते थे। अब यह एक पथरीला वीरान इलाका है, जहाँ धरती फट कर कई खाई बना चुकी है। पर इन पत्थरों के बीच आईसलैंड का इतिहास नजर आता है। आखिर यहाँ लोग कैसे चल कर आते होंगे? और उन दिनों इन कबीलाई लोगों ने लोकतंत्र कैसे स्थापित किया होगा? ध्यान रहे, यह आईसलैंड है, रोम नहीं। यहाँ न शिक्षा उस स्तर की थी, और न ही ये मुख्य यूरोप जितने समृद्ध थे। शायद उसी लोकतंत्र की छाप आज भी नजर आती है आईसलैंड में।

यहाँ एक बड़ी समुद्री झील है, जिसमें अगर छलाँग लगाई जाई तो हम यूरेशिया और

उत्तर अमेरिका के बीचों-बीच स्कूबा-डाइव कर दो बड़े चट्टानों के बीच पहुँच जाएंगे। यहाँ का नजारा अद्‌भुत है। यह दो चट्टान दो अलग-अलग महाद्वीपों के हैं, और इनके मध्य आप। यह दैविक नजर आता है। पर उनको देख यह भी कहना आसान है कि कभी यह भूखंड जुड़े हुए थे। यूरेशिया और अमरीका एक ही थे। अब बिछड़ गए।

कुछ वर्ष पहले अचानक इस झील की बर्फ बिल्कुल ‘ज़िपर’ की तरह फट गई। कई सलीके से कटे खांचे बन गए, जैसे पैंट की ज़िप। इतनी सफाई से बर्फ को कई कि.मी. तक काटना मानव द्वारा संभव न था। यहाँ के लोग मानते हैं कि यह प्रेत तो नहीं, किसी दूसरे ग्रह के जीव का काम है। प्रेत क्या कम थे, ‘एलियन’ और आ गए। ठीक वैसी ही आकृति आज भी कुछ दूर तक दिख रही थी। एक जापानी पर्यटक अपने ‘ड्रोन कैमरा’ से इसकी चित्र उतारने में लगे थे। कैमरा हवा में उड़ कर खाई के मध्य चला गया, झील के ऊपर। ये महाशय यहाँ रिमोट से फ़ोटो लिए जा रहे थे। प्रेत भी आखिर सोचते होंगे कि मनुष्य भी प्रेत ही बनता जा रहा है। हवा में अदृश्य हाथों से फ़ोटो खींच लेता है।

ऐसी बर्फ की चादर से बिछी झीलों पर बच्चे खेलते हैं। नॉर्वे में तो मोटरसाइकल भी चलाते हैं। यह हिलती बर्फ की सिल्लियों पर गाड़ी चलाना लक्ष्मण-झूला की याद दिलाता है। हिलती-डुलती बर्फ की सिल्लियों को जैसे कोई नल-नील बिछा कर चले गए कि हम यह लगून चल कर पार कर लें। पर यह भय तो रहता ही है कि कहीं बर्फ में छेद हो गया, तो हम इस झील के हृदय में समा जाएँगे। लोग अक्सर इसमें एक ड्रिल से छेद कर मछली भी मारते हैं। बर्फ के नीचे दबी मछलियों को जब एक छिद्र से किरण दिखाई देती है, वो सब वहाँ मरने आ जाती हैं। लोग उस मछली को पकड़ कर वहीं बर्फ पर झटका देकर मार देते हैं, और नमक लगाकर खा लेते हैं। कुछ देर हम भी यूँ ही डोलते बर्फ पर चहल-कदमी कर आगे बढ़ गए।

वहाँ से आगे बढ़ा तो एक ज्वालामुखी सा नजर आ गया। हाकला और कातला तो कभी भी फट सकते हैं, और वहाँ जाने का रास्ता भी बंद है। हाकला को लोग नरक का द्वार मानते थे। उनका मानना था कि मृत्यु के बाद जिन्हें नरक नसीब होता है, वो वहीं जाते हैं। कई वर्षों तक इसी डर से कोई इस ज्वालामुखी तक नहीं गया। आखिर एक दिन एक सनकी व्यक्ति हाकला की चोटी तक चढ़ कर आ गया। और उसने कहा कि ऊपर नरक-वरक नहीं है। फिर तो सबने इसकी चढ़ाई शुरू कर दी। अब तो कई सैलानी हाकलारोहण कर आ रहे हैं। पर हमें जो ज्वालामुखी नजर आयी, वो कुछ अलग थी। बर्फ से लदा पहाड़, जो ऊपर से सपाट था। आधा रस्ता गाड़ी से ही चढ़ गया, और फिर पैदल। आखिर ज्वालामुखी के क्रेटर तक पहुँचा, तो उसका लावा भी बर्फ हो गया था। उसकी अग्नि और ताप को हिम ने समाप्त कर दिया। पर विशाल क्रेटर अब भी मनोरम सुंदरता लिए था। कभी-न-कभी इसमें ज्वाला जरूर रही होगी।

प्रकृति के सभी विकराल रूप भला एक छोटे से द्वीप पर कैसे एकत्रित हो गए? संभव है कि आईसलैंड के वासियों को जब विज्ञान का ज्ञान न होगा, तो इनको यह सब दैविक या आसुरिक लगती होगी। हर ज्वालामुखी में एक प्रेत नजर आता होगा। मेरे जैसे व्यक्ति को तो अब ज्ञान है कि ज्वालामुखी आखिर क्यों फटती है। पर उन्हें उस वक्त यह भान न होगा। और तभी औघड़ और तांत्रिक इनसे रक्षा के उपाय बताते होंगे। वो भी अपनी दुनिया के वैज्ञानिक ही थे, गर उन्होंने इसकी भविष्यवाणी सीख ली थी।

ज्वालामुखी की चोटी पर पहुँचते ही आईसलैंड के मौसम ने फिर करवट बदल ली। नरक का छोटा-मोटा द्वार यह भी तो था ही। जो अब तक थोड़ी बहुत धूप निकली थी, वो अचानक बवंडर बन गई। हिलती जमीन, और तीव्र गति से घूमती हवाओं के बीच हिचकोली खाती गाड़ियाँ। और उन गाड़ियों के बीच मेरी होन्डा। होन्डा भूकंप शायद इसलिए झेल लेती है, क्योंकि ये भी ऐसे ही द्वीप पर बनती है जहाँ रोज ही भूकंप और सुनामी आती है। जापान! गर आप पृथ्वी का मानचित्र देखें तो एक ओर आईसलैंड, दूसरी और जापान, और बीच में अमरीका महाद्वीप। यह दो छोटे द्वीप भी एक धुरी ही बनाते हैं। खुद तमाम भूकंप सह कर पृथ्वी को हिलने नहीं देते। और इन्हीं दो द्वीपों पर लोग सौ-सौ साल भी जीते हैं। जहाँ प्राकृतिक आपदाएँ अधिक हैं, वहाँ शायद लोग जीने की कला सीख लेते हैं।

अब ज्वालामुखी से गाड़ी निकली 'गीज़र' की ओर।

'गीज़र' तो आईसलैंड में कई हैं। मैं गुन्नु प्रेत की कहानी सुना चुका हूँ। पर यह गीज़र सबसे विशाल है, जहाँ मैं जा रहा था। जब जमीन का पानी रिस कर धरती के नीचे जाता है, और ज्वालामुखी के गरम मैग्मा से टकराता है, तो उबलने लगता है। इसे आप प्रकृति का 'प्रेशर कुकर' समझिए, कि वह पानी उबल कर वापस जमीन से एक गरम फव्वारे की तरह निकल पड़ता है। गर मौसम शांत हो तो यह गीज़र सैकड़ों फीट ऊपर उछलता है और यह किसी परमाणु विस्फोट सा नजर आता है। उबलता गरम जल, जो अगर शरीर को छू ले तो फफोलें पड़ जाएँ।

जैसे-जैसे हम गीज़र की ओर बढ़ रहे थे, बवंडर के केंद्र में जा रहे थे। हमारे सामने एक गाड़ी बिल्कुल तेजी से लट्टू की तरह घूम कर सड़क से बाहर उतर गई। एक पल के लिए मैं काँप गया। यह सब कुछ फ़िल्मी था, किसी राक्षसी के उत्पात जैसा। एक गाड़ी जब फिसल कर नीचे गिरी, तो हमारी गाड़ी भी साथ बह गई। पर मैं भी बिहार के बरसाती सड़कों पर गाड़ी चला चुका हूँ, तो गड्ढों से बचने का 'रिफ्लेक्स' ठीक-ठाक है। ऐन मौके पर गाड़ी निकाल ले गया, और बाल-बाल बच गया।

पर बच कर पहुँचा, तो पहुँचा कहाँ?

यहाँ तो हर चीज उड़ ही रही थी। लोग-बाग मानव-शृंखला बना कर एक-दूसरे को उड़ने से बचा रहे थे। गाड़ी से उतरते ही मेरे दस्ताने सैर पर निकल लिए। पल भर में आँखों से ओझल हो गए। अब बवंडर की गति 100 कि.मी./घंटा थी, तो मेरा दस्ताना पाँच मिनट में सात कि.मी. आगे तो निकल ही लिया होगा। आईसलैंड में हाथ से दस्ताने जाने का मतलब आईसलैंड पहुँच कर ही लग सकता है। ऊँगलियों को जैसे लकवा मार गया हो। वो जिस अवस्था में थी, एक-दूसरे से जितना कोण बनाकर थी, उसी मुद्रा में जम जाती है। और मेरी तो बस मध्यमा सीधी थी, तो बड़े ही विचित्र मुद्रा में हाथ जम गया था। सामने एक बड़ी सी दुकान में कपड़े ही बिक रहे थे। शायद इस बवंडर में सबके कपड़े उड़ते होंगे, तो इंतजाम कर रखा होगा। वहाँ जाकर पहले दस्ताने खरीदे, और उनको शरीर से मजबूती से बाँध लिया। दुकान वाले को चेतावनी भी दे दी कि गर दस्ताने अब भी उड़ गए, तो अगले दस्ताने का दाम न दूँगा। पर ये बर्फीले देशों के

दुकानदार भी शुष्क होते हैं। उनमें हिंदुस्तानी गर्मजोशी नहीं होती कि कहें, अब यह दस्ताने आपका साथ अर्थी तक न छोड़ेंगें। उसने स्पष्ट ही कह दिया कि बवंडर के सामने दस्ताने कहाँ टिकेंगें। मेरी मानो, यहीं रूक जाओ। अब इस तूफान से बच कर लौटना नामुमकिन है। ऐसी अपशकुनी भाषा कम से कम भारतीय दुकानदारों की नहीं होती। वो आशावादी होते हैं, और ग्राहक को सामान के साथ मुफ्त में विश्वास भी पैक कर के देते हैं। माल चाहे जैसा भी बेचें, ग्राहक उसे दुनिया का सर्वश्रेष्ठ माल समझ कर ही दुकान से बाहर निकलता है।

हमारी भी यह आदत होती है कि जिस चीज के लिए कोई मना करे, वो जरूर कर ली जाए। अब इस तूफान में आखिर निकल ही गया। वो 'गीज़र' भी तो देखना था। बवंडर में गरम फव्वारा और भी भयावह हो गया था। उबलता पानी छलक कर एक बड़े क्षेत्र में फैल रहा था। पर फिर भी कुछ मेरे जैसे खुराफाती गीज़र तक पहुँचने की जद्दो-जहद में लगे थे। बर्फीली जमीन से जब उबलता पानी निकले, तो यह अजूबा लगता ही है। वो पानी उछल कर गिरता और आस-पास के बर्फ को पिघला डालता। पर बर्फ भी कहाँ मानने वाला था! वो उड़ कर फिर से 'गीज़र' के पास आ जाता, एक हठधर्मी प्रेमी की तरह। और गीज़र उसे फिर पिघला डालता। प्रकृति की भी अलग ही रासलीला है।

यहाँ जितने भी सैलानी थे, उनमें अधिकतर चीन से थे। यहाँ होटलों और एयरपोर्ट पर भी चीनी भाषा में अनुवाद लगभग हर स्थान पर था। पता लगा कि यहाँ चीन के कोई धन्ना सेठ बारह वर्ग कि.मी. का एक बड़ा प्लॉट खरीद कर रिसॉर्ट भी बना रहे हैं। एक ठंडे और एक गरम जलप्रपात के मध्य। यह बात हजम नहीं हुई कि भला अपना पड़ोसी चीन यहाँ क्या कर रहा है? दरअसल, चीन के लोग घुमक्कड़ हैं। ह्वेनसांग वगैरा के समय से ही घुमक्कड़ी प्रवृत्ति में अग्रणी देशों में है चीन, और उनकी पसंद बन गया है आईसलैंड। यह भी संभव है कि उन्हें 'गेमिंग' वगैरा का शौक है तो आईसलैंड में प्रकृति हमेशा 'गेम' ही खेलती रहती है। कभी तूफान से भागो, कभी प्रेत से। एक और अजीब बात है कि बाकी दुनिया गर्मियों में आईसलैंड आती है, जबकि चीनी लोग बर्फ में। मैंने एक अंग्रेजी भाषी चीनी सैलानी से पूछा,

"आप इस दुर्गम समय में आईसलैंड क्यों आते हैं?"

"आईस के बिना आईसलैंड में क्या बच जाएगा?" और वो अपनी चीनी हँसी हँसने लगे।

बात तो पते की कही। आईस के बिना क्या आईसलैंड?

यह तो तय था कि तूफ़ान अब थमने वाला नहीं। वहीं जलप्रपात के पास अपना रैनबसेरा था, पर वहाँ रूकने का अर्थ था अनिश्चित काल तक फंस जाना। पर भागने की भी हिम्मत नहीं बची थी। अभी तो बस दस्ताने उड़े, आगे पता नहीं क्या उड़ जाए। लेकिन कलेजा मजबूत कर चल पड़ा।

कुछ दूर जाते ही पुलिस की गाड़ियाँ खड़ी मिली। रास्ता बंद था। अब जो रास्ता था, वो भी दुर्गम था और सफर दोगुना। तो सोचा कि पुलिस से बतिया लूँ। पुलिस एक खूबसूरत तंदुरूस्त लंबी महिला था। खामख्वाह लोग इसे डायनों का देश कहते हैं। इतनी सुंदर डायन हो, तो मुझे इष्ट है यह डायन-लैंड।

“ये रास्ता कब तक खुलने की उम्मीद है?”

“आज रात तक तो कोई उम्मीद नहीं। तूफान की गति तेज हो रही है और यह पहाड़ों से होकर गुजरता है। गाड़ी सीधे खाई में गिरेगी।”

“और आपलोग क्या पूरी रात चौकीदारी करेंगे?”

“हाँ! यहाँ नहीं तो कहीं और। हम ‘स्टॉर्म-चेज़र’ हैं, तूफान का पीछा करते हैं।”

“हम भी तूफान में ही गाड़ी चला रहे हैं दो दिनों से।”

“आप वाईकिंग हैं। बिल्कुल हमारी तरह। आपको कुछ न होगा।”

यह बात इस प्रेम भरे विश्वास से कही गयी, कि तूफान का डर ही खत्म हो गया। और मैं आगे चल पड़ा। आईसलैंड की पुलिस घोड़े पर घूमती, नीले डिज़ाइनदार गाड़ियों में धाँय-धाँय निकलती रोमांटिक ऐक्शन फ़िल्मों के अदाकारों सी नजर आती है। पर इनके हाथों में बंदूक ही नहीं आती। न ही आईसलैंड में कोई फौज है। यहाँ अहिंसा अपने चरम पर है। हालाँकि नॉर्वे में भी पुलिस बंदूक लेकर नहीं घूमती, पर यहाँ तो बिल्कुल ही निहत्थे। इनकी फुर्ती जरूर इतनी है कि उछल कर हाथों से ही अपराधियों के दांत खट्टे कर दें। पर इनका तरीका है कि अपराधियों से बातचीत करते रहना। अक्सर अपराधी वाक्-पटु नहीं होते, और आखिर बतियाते-बतियाते थक जाते हैं। ऐसे पुलिसवाले कि गप्प देकर ही हथियार डलवा लें, तो क्या बुरा है?

अब हमारी गाड़ी धीरे-धीरे समुद्र तट की ओर बढ़ रहती है। यही एक रास्ता है, जो अमूमन कभी बंद नहीं होता। यह बिल्कुल समुद्र के किनारे ‘रिंग रोड’ की तरह पूरे आईसलैंड द्वीप की परिधि से गुजरता है। गाड़ी के एक ओर समुद्र और दूसरी ओर बाकी का आईसलैंड। उस शाम आईसलैंड के मध्य के सभी रास्ते भयानक तूफान की वजह से बंद कर दिए गए, बस यह किनारे का रास्ता खुला रहा। और इसी रास्ते हमें वापस ग्रिन्डाविक पहुँचना था।

इस रास्ते की एक ही समस्या थी, और वो थी- भूतों का समुद्री ‘बीच’। स्टॉकनेस।

आईसलैंड आने वाले सबसे अधिक वाईकिंग और अन्य जहाज यहीं डूब गए। इस तट पर पहुँचना आसान था, तो लोग यहीं पहले आते। पर तट तक नहीं पहुँच पाते। आज यह समस्या नहीं रही, और कई जहाज वहाँ आते हैं। पर लोग कहते हैं कि यहाँ कई आत्माएँ घूमती-फिरती मिलती हैं। जब हम इस तट तक पहुँचे, तो धूप निकल आया था। हालांकि तूफानी रास्ते से निकल कर अचानक धूप का दिखना भी असामान्य ही था। तट बिल्कुल सुनसान था, और समुद्र में बर्फ की पतली सी एक परत जमी थी, जो टूट कर तट पर भी बिखरे पड़े थे। इनकी चमक से आँखें चौंधिया जाएँ। जैसे असंख्य स्फटिक के खंड रेत पर बिखरे हों। और उनकी चमक से ही दूर रेत पर आकृतियाँ नजर आतीं। करीब जाता, तो वो गायब हो जाती। संभवत: वो भूत-प्रेत नहीं थे। और गर थे ही, तो भी मुझसे भय खा गए थे।

खुशी इस बात की थी कि हम बवंडर से आखिर बच निकल आए थे। हम सचमुच

वाईकिंग ही तो थे। उस रात हजारों सैलानी तूफान में फँसे रह गए। कई गाड़ियाँ सड़क किनारे दलदल में रात भर फंसी रही। हेलीकॉप्टर उड़ाना भी संभव नहीं था कि बचाव दल पहुँच सके। और उसी रात रूस में एक हवाई जहाज दुर्घटना में कई लोग मारे गए। सुबह का अखबार बस इन्ही संदेशों से भरा था। पर मेरे मन में यही मलाल रह गया कि गर उस बवंडर में फँसा रहता तो क्या प्रेतों से मुलाकात होती? या फिर कोई जादुई शक्ति ही हमें बचा कर ले आई?

भूतों का हवाई-जहाज

एक विचित्र दुर्घटना तो आईसलैंड में भी हुई।

यह दक्षिण आईसलैंड की रेतीला समुद्र तट जहाँ से हम गुजरे, वहाँ एक जीर्ण-शीर्ण हवाई जहाज खड़ा है। यह कोई संग्रहालय का हवाई जहाज नहीं, यह एक असल जहाज है। भूतों का जहाज। जिससे भूत-प्रेत सफर करते हैं। भूतों की अपनी बोईन्ग।

यह सन् 1973 की बात है। एक जहाज आईसलैंड के ऊपर उड़ते हुए अचानक एक बवंडर में फँस गया, या शायद तेल खत्म हो गया। पर कुछ लोग कहते हैं कि इसमें प्रेत-बाधा थी। यह वही इलाका है, जहाँ कई समुद्री जहाज पहले भी डूब चुके हैं। कुछ-कुछ बरमूदा त्रिकोण वाली बात। संभव है कि कुछ भौगोलिक कारण हो। प्रेत-बाधा पर विश्वास नहीं होता।

जहाजों का जब क्रैश होता है तो कोई नहीं बचता। मुझे समझ नहीं आता कि ये वायु-सुंदरियाँ तमाम सुरक्षा-नियम क्यों सुनाती हैं। गर जहाज क्रैश करेगा, तो क्या एक अस्थि-पिंड भी बचेगा? हम सीट-बेल्ट लगाकर ही आखिर क्या कर लेंगे, जब जहाज ही बिखर कर धू-धू जलेगा? ‘अनब्रेकेबल’ फ़िल्म के ब्रूस विलीस को छोड़ दें, तो जहाज दुर्घटना से एक इंसान का भी बचना नामुमकिन है। कई जहाज तो मिलते भी नहीं। मलेशिया के एक जहाज के कुछ टुकड़े ‘रियूनियन द्वीप’ पर मिले, पर न कोई मनुष्य मिला, न उनके कोई निशान। यह जहाज भला कैसे बच गया, और कहाँ है यह जहाज?

हमारी जानकारी में यह जहाज तट पर ही दिखना था, पर दूर-दूर तक कहीं जहाज नजर नहीं आ रहा था। न ही कहीं इस प्रेत-जहाज के साईन-बोर्ड थे। हम अपनी गाड़ी समंदर तट पर दौड़ाते रहे, और आखिर बर्फीले रेत पर उतर गए। यहाँ कोई न था, एक भुतहा खामोशी थी। पर अब जैसे इसकी आदत पड़ गई थी। प्रेत हमें रास्ता बता रहे थे, हम बढ़ रहे थे। कुछ देर में यह रास्ता बंद हो गया। हमें आगे का सफर पैदल इस बर्फीले दलदल से गुजरते करना था।

कुछ दो-तीन कि.मी. बाद आखिर यह विशालकाय विमान नजर आया। वाकई भूत-यान। जैसे मकड़े के जाले लगे भूत-बंगले, वैसे ही रेत और मिट्टी से भरा यह जहाज। चालीस सालों से बस यूँ ही रेत पर टिका हुआ। किसी ने आखिर इसे हटाया क्यों नहीं? क्या लोग मान बैठे थे कि इसमें भूत बसते हैं, और इसलिए इसे नहीं छेड़ा?

वर्षों पुराने क्रैश के बावजूद जहाज ज्यों-का-त्यों था। लोग कहते हैं कि उस वक्त सब बच गए थे। यह भी आश्चर्य ही है कि यह विमान समुद्र तट पर गिरा, और सब बच गए! क्या अंदर कोई न होगा, जो पिछले चालीस वर्षों से इंतजार कर रहा हो? कोई एक

मुसाफ़िर, जिसकी गिनती न हुई हो? जो अंदर बैठा रह गया हो? यह तो अंदर जाकर ही पता लग पाएगा।

जहाज के द्वार खुले थे, जिन पर बर्फ जरूर जमी थी। हम भेदते अंदर पहुँचे, तो किसी भूत-बंगले की ही याद आ गयी। बस यह एक जहाज था। अंदर भी बर्फ की परतें मिट्टी और रेत में मिली थी। पर यह अंदाजा लगाना कठिन न था कि इसमें कई लोग कभी बैठे थे। वो दिख नहीं रहे थे, पर जैसे मेरे इंतजार में हों। समुद्र तटीय हवाएँ जब इस जहाज की खिड़कियों से होकर गुजरती, तो लगता जैसे वो संवाद कर रहे हों। यह जहाज मुझे समय में पीछे ले जा रहा था।

जहाज के कॉकपिट का कैप्टन अपने अगले जन्म में वापस उस जहाज में लौट चुका है। वो यात्रियों को आश्वासन देता है कि उन्हें कुछ नहीं होगा। सत्तर के दशक की सफेद स्कर्ट में और मर्लिन मुनरो हेयर-स्टाइल वाली वायु-सुंदरियाँ यात्रियों से मुस्कुरा कर बातें कर रही हैं। कोई अख़बार में वियतनाम युद्ध पर रिचर्ड निक्सन के 'मन की बात' का सार पढ़ रहा है। लोग इस युद्ध की निंदा कर रहे हैं। 'वाटरगेट स्कैन्डल' हो चुका है। कुछ युवतियाँ एल्विस प्रेस्ले के हवाई द्वीप कन्सर्ट की बातें करती आहें भर रही हैं, खिलखिला रही हैं। एक वृद्ध इन सब से बेखबर डरे-डरे से नजर आ रहे हैं। जैसे कुछ अनहोनी होने वाली है।

तभी कैप्टन को कुछ अजीब आकृतियाँ नजर आती हैं। वो उनसे सम्मोहित होकर एक गलत बटन दबा देता है, और जहाज का तेल खत्म होने लगता है। जहाज कलाबाजियाँ लेने लगती है, और कोलाहल मच जाता है। यह जहाज कब-कैसे इस रेत पर आती है, और सब कुछ थम सा जाता है। जैसे नीचे खड़े कुछ महामानवों ने जहाज को गोद में ले रखा हो।

"तुम्हें क्या लगता है? सचमुच ऐसा ही हुआ होगा?"

"मुझे तो यह जहाज ही अलग नजर आता है। यह तो छोटा सा युद्ध-जहाज है।"

"युद्ध-जहाज?"

"हाँ! इसका रूप-रंग अंदर से भारी-भरकम है। कॉक-पिट में तमाम मशीनें हैं। इसकी पूँछ गोल-मटोल है। जैसे अभी बम गिरा कर आ रही हो।"

"बम गिरा कर?"

"पता नहीं। पर उन दिनों शीत-युद्ध चरम पर था। यह ज़रूर रूसीयों से भिड़ने के लिए अमरीका ने बिठा रखा होगा।"

"ओह! फिर तो यह भी मुमकिन है कि रूसीयों ने मार गिराया हो।"

"ऐसा नहीं लगता। फिर यह साबुत न बचता।"

"तो फिर क्या हुआ होगा?"

“कुछ भी संभव है। वियतनाम के भूतों की बाधा!”

“हाहाहा!”

यह जो भी था, एक विचित्र यान तो था ही। शीत-युद्ध का अवशेष। वियतनाम-युद्ध की दास्तां कहता अमरीकी बॉम्बर जहाज। या बस यूँ ही एक सहायक जहाज। जिसे भूतों ने अपने देश में सदा के लिए अपने पुराने अड्डे पर रोक कर रख लिया।

शीत-युद्ध के भूतों वाली बात में दम था।

रेक्ज़ाविक शहर में ही एक ‘होफ़्डी-हाउस’ है, जो जाना-माना भूत-बंगला है। लोग कहते हैं कि यह किसी वाईकिंग की कब्र के ऊपर बनाया गया। उस दिन से इस घर में भूतों का वास हो गया। कोई उस घर में नहीं रह सका। अजीब घटनाएँ घटने लगी। बाहर बागान की सफाई कोई भूत कर जाता। कोई अदृश्य शक्ति घर सँभाल रही होती। अधिकतर लोग एक श्वेत-वर्ण स्त्री और उसके किसी सहायक माली की बात करते हैं।

इसी घर में फ़्रेंच दूतावास बनाया गया, तमाम सुरक्षा इंतजाम किए गए। पर भूत-प्रेत से सुरक्षा में यह भी अक्षम निकले। एक दूतावास का भूतों की वजह से बंद होना शायद ही किसी देश में हुआ हो। लेकिन उसके बाद जो हुआ, वो ताजमहल के वाजपेयी-मुशर्रफ वार्ता की याद दिलाता है। जब दो लोग कब्र पर समझौता करेंगे, तो आखिर क्या होगा? ताजमहल भूत-बंगला ही तो है। विश्व का सबसे सुंदर भूत-बंगला। जब आगरे के किले के जालीदार झरोख़े से मैं ताजमहल देख रहा था, तो लगा जैसे आज भी किसी की नज़रें वहाँ अपनी मुमताज़ को देख रही हैं। अब इन आँखों ने जब दो ज़ंग में उलझे देशों के राजाओं को वहाँ मिलते देखा होगा, तो क्या किया होगा? उसके अय्यारों ने वार्ता पर पानी डाल दिया। ताजमहल छोड़ अगर कॉफ़ी हाउस में मिलते तो बात बन गयी होती।

यही गलती रोनाल्ड रीगन और मिखाइल गोर्बाचोव ने भी की। वो इस आईसलैंड के भूत-बंगला में शीत-युद्ध खत्म करने पहुँच गए। शीत-युद्ध का खात्मा शीत-प्रदेश के भूत-बंगले में? पता नहीं, इन वार्ताओं के ज्योतिषी कौन हैं?

जब रीगन और गोर्बाचोव इस भूत-बंगले में मुस्कुराते पहुँचे, तो वहाँ कोई तीसरा भी था। उसने ऐसी छड़ी चलाई कि यह वार्ता फुस्स हो गयी। प्रेतों ने सोचा कि यह शीत-युद्ध चलता ही रहे, लोग गाहे-बगाहे मरते रहें, प्रेतों की प्रेतसंख्या बनी रहे। अब क्या हुआ, यह तो प्रेत ही जानें, या जानें रीगन और गोर्बाचोव।

अब सोचिए, विश्व की दो महान् शक्तियों ने प्रेत-बाधा के सामने घुटने टेक दिए, और हम उनकी महत्ता ही नहीं समझते। अगर हम प्रेतों से प्रेम-संबंध बिठा लें, तो दुनिया की तमाम समस्यायें छू-मंतर हो जाए। आईसलैंड के औघड़ अगर उस वार्ता में होते, तो कुछ और बात होती। ये भारत-पाकिस्तान और रूस-अमरीका के द्वंद समाप्त हो जाते।

खैर, इन शीत-युद्ध के भूतिया जहाज और बंगलों से मुझे क्या? हाँ! शांति के कुछ ऐसे अदृश्य रास्तों की तलाश तो रहती ही है। इस प्रेत-बाधा से शांति के।

देवभाषी देश

“आप सभी इतनी बढ़िया अंग्रेज़ी कैसे बोल लेते हैं? नॉर्वेजियन से बेहतर है आपकी अंग्रेज़ी।”

“नॉर्वे अपने दम पर जीता है। और हम आपके दम पर।”

“मतलब?”

“यह देश टूरिस्टों से ही तो चलता है। इंग्लैंड के लोग तो साल के महीने-दो महीने यहीं पड़े रहते हैं।”

“बात तो सही है। भारत में भी टूरिस्ट-प्लेस का बच्चा-बच्चा अंग्रेजी सीख जाता है।”

“भारत में तो सुना है कि किसी भी प्लेस का बच्चा अंग्रेजी सीख जाता है।”

आईसलैंड वाला फिर कटाक्ष कर गया। जता गया कि हम अंग्रेजी भाषा के गुलाम आज भी हैं। इसका ‘टूरिस्ट’ से कुछ लेना-देना नहीं। अंग्रेजी तो बोल-चाल, चाल-ढाल, लाल-बाल-पाल सबकी भाषा है। जो अंग्रेज़ी न बोल पाए, उसको तो एक ‘बी.पी.एल.’ सरीखा कार्ड मिलना चाहिए, और सरकारी राहत भी। मात्र छब्बीस अक्षरों की इस भाषा ने सारे ‘ॠ और लृ’ की पुंगी बजा दी। अब हम सैलानी से ‘टूरिस्ट’ बन गए। हममें ‘कॉमन सेंस’ आ गया। हम ‘अंडरस्टैंड’ करने लगे। इज़न्ट इट?

पर हिंदी भी तो नयी भाषा है। खड़ी बोली। गर हम खुद को न बदलते तो आज संस्कृत बोलते-बोलते हमारे जीभ टेढ़े हो जाती। गले में खरास आ जाती। तालु में छाले पड़ जाते। और साँस की बीमारी हो जाती। अब संस्कृत का यह शब्द ही लीजिए-

निरन्तरान्धकरितादिगन्तरकन्दलदमन्दसुधारसबिन्दुसान्द्रतरघनाघनवृन्दसन्देहकरस्यन्न

(क्रमश:)

एक व्यक्ति यह शब्द कहते हुए चल बसे। भला इतनी संधि की आवश्यकता क्या है? पर ताज्जुब है कि आईसलैंड आज भी ऐसी ही भाषा बोल रहा है, लिख रहा है।

वाथ्लाहाइथारवेगाविन्नुवर्कफारागेम्सलुसकुरायुतिदीरालुक्याकिपुहरिंगुर

अर्थात किसी सड़क-मजदूर के कार्यस्थल की चाभी। और यह आज भी प्रयोग में है!

पर यह अजीब बात है कि हजारों वर्ष पहले बातें तोड़ कर नहीं, संधि कर कही जाती

थी, एक साँस में। फिर हम तोड़ने लगे। अब तोड़ते-तोड़ते गर खत्म ही हो गया, तो क्या आश्चर्य?

आईसलैंड की भाषा देवभाषा ही है, जिसे हजार वर्षों से बदला नहीं गया। उसके मूल रूप में ही छोड़ दिया गया। मामूली बदलाव हुए, पर खास नहीं। जबकि इसी देवभाषा के मूल प्रणेता जो नॉर्वे में थे, उनकी भाषा बदलती गई। अब नॉर्वेज़ियन, स्वीडिश या डैनिश निकले तो एक ही भाषा से, पर अब वो भाषा बस आईसलैंड में रह गयी। और उसे बस आईसलैंड के लोग ही समझ सकते हैं। जैसे संस्कृत भारत में अब कुछ गिने-चुने ही बोल-समझ सकते हैं। एक देवभाषा की कलयुग में यही नियति है।

'ऋग्स्थूल', जो नॉर्स ऋग्वेद के समकक्ष कह सकते हैं, वो इसी भाषा में है। वाईकिंग युग की ऐतिहासिक कविताएँ और कहानियाँ इसी भाषा में है। तमाम तंत्र के मंत्र भी इसी भाषा में है। इसलिए तंत्र की शक्ति भी अब बस आईसलैंड में है। जबकि पूरे स्कैन्डिनैविया में सबसे युवा देश आईसलैंड है। विश्व का ही सबसे युवा देश कहिए। यह भी एक विडंबना ही है कि जिस देश का इतिहास सबसे छोटा है, वहाँ इतिहास ज्यों-का-त्यों है। जिन देशों का इतिहास प्राचीन और गौरवशाली है, उनका इतिहास मिट गया।

पर यह कैसे मुमकिन हुआ?

कम्प्यूटर तो हजार वर्षों पहले नहीं था, तो उसके लिए हजार वर्षों पुराना शब्द कैसे चलेगा? कम्प्यूटर को आईसलैंड में 'टोल्बा' कहते हैं। जो 'टाला' और 'वोल्बा' की संधि से बना। 'टाला' का अर्थ है अंक। 'वोल्बा' का अर्थ है ज्योतिषी। अंकों से ज्योतिषी करता है— कम्प्यूटर। यह आईसलैंड वालों ने दशकों पहले ही ठान लिया कि नए शब्द न लाकर, यथासंभव पुराने शब्दों को ही नए प्रयोग में लाएँगें। यह बड़ा ही रूढ़िवादी और दकियानूसी सिद्धांत नजर आता है, पर पता नहीं इस रूढ़िवाद में कुछ आधुनिकता भी नजर आती है। इस भौगोलिक रूप से टूटते हुए देश की जमीन खिसक रही है, पर जड़ें मजबूत हैं।

"आपके बच्चे भी आईसलैंडिक बोल लेते हैं?"

"हाँ! घर में तो यही बोलते हैं। पर बाहर अंग्रेज़ी ही चलती है।"

"ओह! फिर तो बात नहीं बनेगी। नॉर्वे में घर-बाहर एक ही भाषा है।"

"हमारी हजार वर्ष चल गयी। उनकी तो रोज बदलती है। और आपकी?"

फिर मजाक बना गया। अंग्रेजी के प्रयोग में हानि नहीं, पर हिंदी घर में बोली जाए तो बच जाएगी। घर में हिंदी, बाहर अंग्रेजी। अंग्रेजी जिस दिन घर में घुस गयी, भाषा खत्म हो जाएगी।

देवभाषा की एक और ख़ासियत है। कई पर्यायवाची शब्द। जैसे शिव के हज़ार नाम हैं। हर शब्द के सैकड़ों पर्यायवाची हैं, और हर पर्याय कहने का अलग अभिप्राय है। ठीक वैसे ही आईसलैंड में भी हर शब्द के कई पर्याय है। मात्र बर्फ के लिए ही पचास शब्द हैं,

और पचासों उपयोग में हैं। हर शब्द का अर्थ एक अलग तरह का बर्फ है। जैसे ‘फिफ़्टी शेड्स ऑफ़ ग्रे’ कहते हैं, वैसे ही समझिए ‘फिफ़्टी शेड्स ऑफ़ स्नो’। यह माया मात्र आईसलैंड वाले ही जानें। मेरे लिए तो हर बर्फ हिम ही है, उसके अब कितने पर्याय बनाऊँ। पर जैसे हमारी मिट्टी के सौ प्रकार हैं, उनके- बर्फ के।

पर यह प्रश्न मन में जरूर है कि आईसलैंड ने ऐसा किया क्यों? भाषा क्यों नहीं बदली? या ऐसा तो नहीं कि ये भाषा बदल ही नहीं पाए?

इसके जवाब के लिए मैं बच्चों की परवरिश समझने की कोशिश करने लगा। भाषा तो बचपन में ही सीखी जाती है। इतने कठिन शब्द उनको कैसे बोलना सिखाया गया? और मुझे जैसे उत्तर मिल गया!

आईसलैंड में बच्चों को घर के बाहर अकेले छोड़ने का रिवाज है। शैशव काल से ही। चाहे मौसम ठंडा हो या गरम। बच्चे एक पालने या प्रैम में घर के बाहर पड़े मिलेंगे। उनके माँ-बाप अंदर टी.वी. देख रहे होंगे। जब तूफान में ही जीना है, तो तूफान की आदत डाल लें। लेकिन अगर इस वीराने में कोई साथ बतियाने या खेलने को बच्चा न हो, दादा-नाना न हों तो बच्चा भाषा सीखेगा कैसे? और वो भी ऐसी कठिन भाषा?

कहते हैं कि ‘एमिनेम’ नामक श्वेत रैप-गायक ने शैशव काल से ही रैप करना शुरू दिया था। जबकि उनके घर में ऐसी रूचि किसी की न थी। बाद में पता लगा कि उनकी देख-भाल करने वाली अश्वेत महिला शौकिया रैप करती थी, और वही गाकर सुलाती थी। बच्चा भी करने लग गया। कुछ ऐसा ही आईसलैंड के बच्चों के साथ भी होता है। वो अकेले घर के बाहर खिलखिलाते गप्प मारते रहते हैं। किनसे, यह बताने की अब जरूरत नहीं है। और यह भी नहीं कि ये अपनी प्राचीन भाषा बोलना आखिर कैसे सीख जाते हैं?

ब्लू लगून

अब पहुँच गया - द ब्लू लगून!

आईसलैंड जो भी आता है, जहाँ से भी आता है, वो 'ब्लू लगून' में जरूर नहाता है। इसे यहाँ की गंगा कह लीजिए, जहाँ डुबकी लगाने से तमाम रोगों से मुक्ति मिलती है। मेरा पक्का विश्वास था कि इससे भी किसी प्रेत की कथा जुड़ी होगा, पर यह गलत सिद्ध हुआ।

ब्लू लगून इस बर्फीले देश की गरम झील है, जो समुद्र से छिटक कर बनी है, और इसलिए पानी नीला है। ज्वालामुखी के गरम पत्थर इसे साल भर गरम रखते हैं। जब बाहर - 20 डिग्री तापमान हो, और इस पानी में पैर डालते ही 38 डिग्री तो आश्चर्य होता है। कुल्लू के मणिकर्णिका और खीरगंगा की याद दिलाता है। भारत में गर यह अजूबा होता तो अवश्य कोई धार्मिक-स्थल ही होता। यह भगवान् कार्तिक से जुड़ा होता या नरसिंह से। आस्था से जुड़ते ही सैलानी जुट जाते हैं। पर जहाँ खीरगंगा में नाड़े वाली चड्डी की जेब में प्लास्टिक के पाउच में पैसे सँभाले लोग दिखते है, यहाँ बिकनी में हाथ में कॉकटेल पर नींबू लगाए युगल जोड़े। पता नहीं, इसमें भला पाप कैसे धुलेंगें?

यह अद्‌भुत् है। इतना नीला स्वच्छ गरम जल जब बर्फीले पहाड़ों के मध्य मिले, तो कोई भी डुबकी लगाना चाहे। पर जहाँ खीरगंगा में मुफ्त में डुबकी लगा सकते हैं, इस ब्लू लगून को पूरी तरह से घेर कर इसे 'हेल्थ-स्पा' बना दिया गया है। यहाँ दूर-दूर से लोग त्वचा-रोग और गठिया से मुक्ति के लिए आने लगे। हर घंटे लगभग सौ लोगों की बुकिंग है, जो हमें नॉर्वे में बैठ एक महीने पहले ही करानी पड़ी। इसके कई पैकेज़ बना दिए गए हैं। गरीब-क्लास से प्रीमीयम क्लास तक। गरीब क्लास में अपना गमछा-चप्पल लेकर आओ, उससे ऊपर के क्लास में गमछा मिलेगा, उससे ऊपर के क्लास में गाउन और चप्पल मिलेंगें, और सबसे ऊपर के क्लास में जल के अंदर एक गोरी पैर भी दबाएगी। हर क्लास एक दूसरे का दोगुना है। अब मैं जिस क्लास में भी गया, वह रहस्य ही रखता हूँ। पर इतनी ठंड और तूफान से निकल कर यह लगून पैसा-वसूल था।

जल के अंदर अपना सर डालते ही कानों में एक फुसफुसाहट सुनाई दी। मुझे यकीन नहीं हुआ पर दुबारा सुनाई दी। यह हॉरर-फ़िल्मों वाली भुतहा आवाज थी, जैसे किसी जंगल में असंख्य पत्ते एक साथ फड़फड़ा रहे हों। मेरे पास एक ग्रीक युवतियों का समूह था, उनसे पूछ-ताछ की, पर उनमें से किसी ने सर अंदर डाला ही नहीं था। विदेश में भी युवतियाँ बाल ज्योतिषी से दिखवा कर ही गीला करती हैं। कुछ दूर खड़े एक अफ्रीकी से पूछा, तो उसने कहा कि सुनाई तो दे रही है, पर यह नॉर्मल है। अब अफ्रीका के जंगलों में ऐसी आवाजें सामान्य होंगीं। किससे पूछ लिया?

इस लैगून की सतह लावा पत्थरों से बनी थी। वही लावा पत्थर जिसकी गुफाओं में

‘एल्व’ रहते हैं। अदृश्य जीव। यह उनकी ही आवाज थी। मैं इन आवाजों को समझने की कोशिश करने लगा। यह पत्तों की आवाज, नहीं, झींगुरों की आवाज थी। तिलचट्टों की। पर यहाँ तिलचट्टे कहाँ से आए? और इतने तिलचट्टे एक साथ?

लैगून से बाहर निकल कॉफ़ी पीने बैठ गया। वहाँ एक थाई मूल की महिला थी, जिसने बताया कि यह ‘एल्व’ की ही आवाज है। चलिए, एक समस्या तो सुलझ गयी। प्रेत देखा नहीं, मगर आवाज तो सुन ली।

पर यह भूत-प्रेत विज्ञान से क्या जीत पाते?

मैं उस आवाज का पीछा करते-करते लैगून के सिरे तक पहुँच गया, और वहाँ से कुछ दूर एक बड़ी फैक्ट्री नजर आयी जहाँ से धुआँ निकल रहा था। यह फैक्टरी तो मानव-निर्मित ही थी। यह एक ‘जियोथर्मल पावर प्लान्ट’ था। इस तरह के कारखाने दरअसल गरम पत्थरों से बिजली उत्पादन करते हैं। अगर अधिक विस्तार से कहूँ तो धरती के ‘कोर’ यानी केंद्र की गर्मी से उत्पन्न ऊर्जा। इस दौरान जो जल गरम होता है, वो इस लगून में बहा दी जाती है। और यह धरती के केंद्र से निकलता प्रवाह ही इस तरह की विचित्र आवाज निकलता है। मूलत: ये दुनिया को उल्लू बना रहे हैं, जो इसे प्रकृति की देन और ‘एल्व’ की आवाज मान रहे हैं।

यह जरूर है कि इसमें कई खनिज और सिलिका से त्वचा रोगों में मदद मिलेगी। वो तो मुल्टानी मिट्टी से भी मिलती है। लेकिन बाजार बनाने के लिए जो माहौल बनाना पड़ता है, वो इन लोगों ने कर दिया। कारखाने के जल को गंगा बनाकर बेच दिया। और मेरे जैसे लाखों लोग इस महान लगून में डुबकियाँ लेकर परमानंद पा रहे हैं।

‘ब्लू लगून’ में विदेशी जोड़ों को छद्म-वस्त्रों में लिपटे देख यह लगा कि भारत में यह शायद संभव नहीं कि रोगोपचार और रंगरेलियाँ एक ही स्थल पर हो। आयुर्वेद ‘स्पा’ को भक्ति से जोड़ना ही संभव है, जहाँ यह रास-लीला न हो। और अगर हो भी तो क्या विवाहित युगल इस कदर ‘पब्लिक’ में अर्धनग्न लिपटेंगें? कुल मिलाकर ‘ब्लू लगून’ की भारतीय कल्पना ‘फ्लॉप’ रही और मैं स्वप्न तोड़ काउंटर से मिट्टी ले आया। एक आईसलैंड की महिला प्रेम से सफेद और हरी मिट्टी ऐसे बाँट रही थी, जैसे सत्यनारायण भगवान का प्रसाद बँट रहा हो। और सभी भक्त-जन उसे अंजलि में लेकर मुँह पर पोते जा रहे थे। कुछ ही पल में उन्हीं भूतों में एक हिंदुस्तानी भूत भी जुड़ गया। अब दिखे असल प्रेत-प्रेतिन! मुँह पर ‘सिलिका मड’ पोते हुए।

‘ब्लू लगून’ की जल-कन्यायें इतनी भायीं कि तीन घंटे वहीं दरियाई घोड़ा बन पड़ा रहा। गरम खारे पानी में इतनी देर बिताकर त्वचा पर गड्ढे पड़ गए। डिम्पल। पर वापस जब बर्फ में निकला, डिम्पल सीधे हो गए। नहीं-नहीं! यह प्राकृतिक है। प्रेत की बात नहीं।

‘ब्लू लगून’ तो खैर अय्याशी का एक अड्डा है, पर आईसलैंड में कई ऐसे छुपे हुए लगून भी हैं। ऐसे गरम झील जो पूरी तरह प्राकृतिक हैं। पर उन्हें खुद ही ढूँढना पड़ता है। एक पहाड़ पर चढ़ कर एक क्रेटर-नुमा गरम झील हमने भी ढूँढा, पर उसकी ढलान इतनी तेज थी कि उतरने की हिम्मत नहीं हुई। पर उससे निकलते गरम भाप को देख कर लग

रहा था कि यह 'ब्लू लगून' से भी अधिक गरम होगा। वहाँ लगे एक बोर्ड से यह पता लगा कि यह एक ज्वालामुखी का क्रेटर है। यह ज्वालामुखी जब डेढ़ सौ वर्ष पहले फटी थी, तो उसका लावा मीलों दूर समंदर पार डेनमार्क तक में भी गिरा था। जैसे अंडमान में ज्वालामुखी फटे और लावा कलकत्ता तक जा गिरे। इसकी ज्वाला देख कर अब भी यह आभास हो रहा था, कि वाकई यह विकराल ही रहा होगा।

ऐसा ही एक लगून गुफा के अंदर है, जहाँ 'गेम ऑफ़ थ्रोन्स' के जॉन स्नो और इग्रीटा रासलीला मनाते हैं। एक अंधेरी गुफा में छन कर आती रोशनी और गरम झील। यहाँ भला कौन रासलीला न मनाना चाहे? पर अंदर का माहौल जितना सुंदर, उतना ही डरावना। यह मनुष्य की नहीं, प्रेतों की रास-लीला स्थल ही अधिक लगती है।

सड़ी मछलियों का भोग

आज सोचा कि कुछ मत्स्य-भोग करूँ। आईसलैंड की मछलियाँ मशहूर तो हैं ही, पर आज कुछ ऐतिहासिक खाने का मूड था। सड़ी हुई मछली। आईसलैंड की सबसे मशहूर डिश।

जब वाईकिंग पहली बार आईसलैंड आए, तो पूरा द्वीप छान मारा, लेकिन कुछ खाने को नसीब नहीं हुआ। आखिरकार ये समुद्र से खूँखार शार्क पकड़ लाए। किन्तु शार्क तो विषैला होता है, फिर इसका ग्रास कैसे संभव हो?

शार्क के सर को पहले काट कर अलग कर देते। इससे आधा विष खत्म हो जाता। और फिर शार्क को तीन महीने तक जमीन में पत्थरों के नीचे गाड़ कर रख देते। वहीं यह मछली सड़ कर अपना विष छोड़ती। उस सड़े हुए शरीर में ही पत्थर और मिट्टी के कण भी घुस जाते। आखिर इसे तीन महीने बाद कब्र से निकाला जाता, और पका कर खाया जाता। यह सड़ाई मछली ही आज आईसलैंड की सबसे कीमती भोजन में है।

देखिए, इन चालाक लोगों को! पहले कारखाने के कूड़े को ‘ब्लू लगून’ बना गए और अब सड़ी हुई मछली को मंहगा व्यंजन। ऐसी बुद्धि से गर कोई देश धन बनाने में कामयाब है, तो दाद देनी ही होगी।

यह सड़ा हुआ शार्क मुझे चौकोर टुकड़ों में मिला, जिसके साथ यहाँ की गरम वाइन। सच पूछिए तो इस शार्क में एक अजीब दुर्गंध और मटमैला स्वाद था। पर मैं चूँकि घोंघा वगैरा भी करी बना कर खा चुका हूँ, तो यह शार्क भी खा ही गया। तीन महीने कब्र में रह कर शार्क भी प्रेतात्मा बन चुकी थी, और मैं प्रेतभक्षी।

शराब के साथ सड़े हुए शार्क के टुकड़े खाना कुछ खास नहीं रहा, पर सूखी हुई मछलियों के पकौड़े खूब थे। सूखे हुए कॉड मछली को मसालेदार बना कर यह लाजवाब चखना बनाते हैं। पर इसे खाते देख आस-पास लोग मुस्कुराने लगे। मुझे कौतूहल हुआ, पर किसी से कुछ न पूछा। बाद में पता लगा कि यह तो बच्चों का हल्का-फुल्का भोजन है। ‘किड्स’ का। ‘लीज़ेन्ड्स’ तो सड़े शार्क ही खाते हैं। जो भी हो, यह खा-पी कर वाईकिंग तो बन ही गया।

दरअसल कड़वी या बेकार से स्वाद वाले चीजों को गले से उतारने के लिए इन्होंने शराब का इजाद किया। यहाँ की शराब ‘ब्रेनीविन’ आलू वगैरा से तैयार होती है। बिल्कुल सफेद शराब। ऐसी शराब नॉर्वे में ‘एक्वाविट’ कहलाती है। गिलास में यूँ नजर आती है जैसे कि शीतल जल हो। एक टुकड़ा मछली दवाई की गोली की तरह हाथ में लो, और तेजी से ब्रेनेविन के साथ निगल जाओ।

यह कुछ कुछ कर्नाटक के रागी मुद्दव (रागी के गोले) की याद दिलाता है। उसे भी चबाना या खाना नहीं, निगलना होता। और साथ में तीखी मांस करी का रस पी जाना होता। इसमें थोड़ी भी गलती हुई तो रागी मुद्दव गले में अटक जाएगा। यह भी एक कला है, और इसी कला से आखिर यह शार्क खा पाया।

आप पूछेंगे कि भला इतनी जतन करने की जरूरत क्या है? अब सोचिए कि उस जमाने में आए ये आदिम वाइकिंग भला इस विषैले शार्क को कैसे खाते होंगे? मनुष्य गर आदिम मानवों की तरह नहीं जी सकता, नहीं खा सकता, तो खामख्वाह पूर्वजों का विजय-गान गाता है। गर वो न होते, तो आईसलैंड न होता। ऐसे कई आदम भोजन विश्व ने भुला दिए, पर आईसलैंड ने इसे अपने देश का बेशकीमती भोजन बना दिया। यह अपने पूर्वजों को आज भी इसी तरह याद करते हैं। और तभी इन्हें उनके आज भी इस द्वीप पर होने का भरोसा है।

एक और बात। आईसलैंड में शराब कभी पूरी तरह से बैन थी, पर आज सस्ती मिलती है। यूरोप के एक ठंडे देश में 1989 ई. तक शराब मिलती ही नहीं थी। गैर-कानूनी थी। यह उस मिथक को तोड़ता है कि ठंडे देश में जीने के लिए शराब पीना जरूरी है। यह बात मोहनदास करमचंद गांधी भी लिख गए कि यह मिथक गलत है। ठंडे देश में भी बिना शराब के जीना संभव है। आईसलैंड तो इसका ज्वलंत उदाहरण है ही। जिस दिन आखिर मद्य-निषेध कानून खत्म हुआ, वो दिन यानी 1 मार्च आज भी 'बीयर-डे' की तरह मनाया जाता है, जब पूरा आईसलैंड शराब के नशे में धुत्त होता है। अब इस देश में शराब के बिना जीना संभव नहीं। जो है, जैसा है, ठीक ही है। यह देश कभी इतना पियक्कड़ भी था कि हजार वर्ष पुराने कंकालों में शराब के सूत्र मिले। विज्ञान के हिसाब से इतने वर्ष लाश में शराब बचती नहीं। पर बर्फीले देश में लाशों का गलना-सड़ना भी तो नहीं हो पाता। कोई हजार वर्ष पहले शराब पीकर मरा, आज भी उसके मुँह से बू आ रही है। हद है।

एक और अजीब बात पता लगी यहाँ के केले बागानों के बारे में। यूरोप में सबसे अधिक केले इस बर्फीले देश में ही होते हैं। अब इस बात का कोई तुक नहीं बैठता, पर क्या यही सच है? काफी तफ्तीश कर पता लगा कि यह भी अफवाह है। केले अधिक फ्रांस में होते हैं, पर किसी ने हल्ला कर दिया कि आईसलैंड में केले होते हैं। केले होते जरूर हैं, यहाँ के ग्रीनहाउस में। पर वो इतने भी नहीं होते कि पूरा यूरोप खा सके। मैनें यूँ ही पूछा कि फिर यहाँ केले खाते कौन हैं? जवाब मिला कि लोग तो नहीं खाते, पर कोई न कोई बागानों से केले खा जरूर लेता है। यह भी एक रहस्य ही रह गया। केले खाने वाले भूत!

प्रेतिनों से भेंट

“आप डॉक्टर हैं? सचमुच?”

“हाँ! क्यों?”

“हमारे गाँव को डॉक्टरों की सख्त जरूरत है।”

“आईसलैंड तो छोटा सा देश है। यहाँ कितने डॉक्टर चाहिए?”

“देश छोटा जरूर है, पर हमारे पाँच हजार लोगों पर बस एक डॉक्टर है। वो भी रास्ता बंद हो, तो पहुँच नहीं पाते।”

“तो फिर बड़ी मुश्किल होती होगी। लोग खूब मरते होंगे।”

“मरते नहीं। पर हाँ! पीठ दर्द वगैरा की समस्या तो रहती ही है।”

“पीठ दर्द? दुनिया में लोग तमाम बीमारियों से मर रहे हैं, और आपको पीठ दर्द की पड़ी है?”

“मरते होंगे। यहाँ तो बीमारियाँ पहुँच ही नहीं पाती। उसके भी रास्ते बंद हैं।”

और वो हँसने लगा।

आईसलैंड में प्राईवेट अस्पताल हैं ही नहीं। छह सरकारी अस्पताल और कुछ सरकारी क्लिनिक हैं। उन्हीं से आईसलैंड का काम चल जाता है। और यहाँ के लोग तो वाईकिंग की ही संतान हैं, सो बीमार नहीं पड़ते। सौ साल जीते हैं, और मरने का उत्सव मनाते हैं। अगर आप यह सोच कर आईसलैंड पहुँच जाएँ कि सौ वर्ष जीयेंगें, तो इस मुगालते में न रहें। यहाँ बस आईसलैंड के लोग ही जी सकते हैं। बाकी की कुव्वत नहीं कि बिन डॉक्टर, बिन हस्पताल इस बीहड़ देश में जी लें। कई तो प्रेत देखकर ही हृदयाघात से मर जाएँ, और बाकी ठंड और बर्फ में दब जाएँ।

“यह बड़ी खूबसूरत चिड़िया है। समंदर किनारे ही मिलती है?”

“हाँ! खाएँगें? बेहतरीन बर्गर है मेरे पास- पफ़िन बर्गर।”

“इस चिड़िया का?”

“हाँ हाँ! जरूर खाइए यह बर्गर। यह न खाया तो आईसलैंड आना निरर्थक है।”

अब ऐसी बात कह दी तो पक्षी-भोग भी लगाना पड़ गया। पर चिड़िया थी बड़ी प्यारी, सफेद धारीयों वाली गौरैया जैसी। पफ़िन! और बर्गर भी खूब था। पूरे स्कैंडिनैविया में खाने-पीने की जगह दरअसल आईसलैंड ही है। जो भी चलती-फिरती-उड़ती-तैरती दिखी, पकड़ कर खा गए।

यह खा-पी कर होटल में आराम करने गया, और यूँ ही सोचा कि कुछ देर टी.वी. देख लूँ। पर यह क्या? यह तो पॉर्न चैनल है। इसमें कोई नयी बात नहीं। भारत के होटलों में भी पॉर्न-चैनल मिलते हैं, पर वो गैर-कानूनी रेकॉर्डिंग होती है। यहाँ तो बाकायदा एक प्राईवेट चौबीस घंटे पॉर्न चैनल चल रहा है। गौर किया तो यह पोलैंड से टेलीकास्ट किया जा रहा है, पर नॉर्वे में यह संभव नहीं। आईसलैंड 'सेक्स' के लिए ऐतिहासिक रूप से ओत-प्रोत देश है। रेक्जाविक का लिंग संग्रहालय और अब होटल में चौबीस घंटे का पॉर्न-चैनल। यहाँ के लोग अपने दिन का एक बड़ा समय 'सेक्स' में ही लगाते हैं। यह भी इनका एक अनुष्ठान ही है।

अब रात हो गयी थी। सोचा कि कुछ देर चहल-कदमी कर लूँ। आईसलैंड की अंधेरी रात में भी चहुँदिशा में पसरी बर्फ एक चमक बनाए रखती है। पर आज क्षितिज पर कुछ हो रहा था। और यह मेरी यात्रा का सबसे महत्वपूर्ण दृश्य था, जब मुझे एक साथ कई प्रेत नजर आ रहे थे। नीले और हरे रंग की वेश-भूषा में दूर क्षितिज पर। उनकी संख्या बढ़ती गई, और उनका नृत्य आकाश में नजर आने लगा। यह दृश्य विश्व में कुछ ही कोनों में शायद नजर आए। वैज्ञानिक इसे 'ऑरोरा बोरियैलिस' कहते है, जो आईसलैंड में यूँ ही एक रात टहलते नजर आ जाता है। पर यह क्षणिक था। अचानक बादल घिर गए, और वो रंग-बिरंगे प्रेत लुप्त हो गए। मैंने ही शायद उन्हें छेड़ दिया। यह चेतावनी तो मुझे उस गाड़ी के मालिक ने ही दे दी थी कि कभी किसी प्रेत को परेशान मत करना। मैंने मजाक मान लिया था। पर ये तो सचमुच बुरा मान गए। सेकंडों में हवा हो गए।

कुछ तीन-चार कि.मी. की चहलकदमी कर गया। कभी समंदर किनारे, कभी यूँ ही बेजान सड़कों पर। यहाँ लोग ही नहीं बसते। एक लाख वर्ग कि.मी. में मात्र तीन लाख लोग। इतने कम तो किसी यूरोपीय देश में नहीं। पर यहाँ के लोग ऐसा नहीं मानते।

"हमारे लोग आप गिन भी तो नहीं सकते। हमारे किस्से-कहानियों के जो पात्र हैं, और जो अदृश्य लोग हैं , उनको भी जोड़िए। और उन सैलानियों को जो हर वक्त यहाँ बदलते रहते हैं।"

अर्ध-रात्रि में रेक्ज़ाविक का रूख करना ही बेहतर था। यह 'नाइट-लाइफ़' यानी निशाचर जीवन भारत के भी कुछ शहरों में नजर आता है, पर छोटे शहरों की अंधेरी रात में कुत्ते ही भूंकते हैं। रात को युवतियाँ निकल कर पार्टी करे, यह भारतीयता नहीं। इनके तीन लाख रात को सड़कों पर निकल जाते हैं जब हमारे अरबों लोग घोड़े बेच सोते हैं।

गोवा की सड़कों की तरह आजादी तो नहीं कि खुली जीप पर शराब पीते जाओ, पर आईसलैंड की बार में यह मुमकिन था कि टेबल पर चढ़ नाचने लगो, चिल्लाने लगो। ऐसी रंगबाजी यूरोप में हर जगह मुमकिन नहीं, पर आईसलैंड जैसी जगह पर अतिथि

ही देवता है। उन्हीं से इनका देश चलता है। तो तोड़े जाओ कुर्सी-टेबल। वह पूरी सड़क ही बार और पब से भरी पड़ी थी। लोग गर एक बार से दूसरे बार घूमते तो इसकी वजह शराब की गुणवत्ता नहीं बल्कि लड़कियों की संख्या थी। या युवतियों के लिए लड़कों की संख्या। कुछ समलैंगिक भी थे। इस गली में बाहर जितनी ठंड थी, उतना ही अंदर गरम माहौल।

समलैंगिक से ध्यान आया कि इस देश की प्रधानमंत्री खुले तौर पर समलैंगिक रह चुकी हैं। और ऐसा करने वाली वो विश्व की पहली प्रधानमंत्री थीं। यह भी मात्र आईसलैंड में ही संभव है।

आईसलैंड की महिलाएँ स्वच्छंद तो हैं, पर नॉर्वेजियन लोगों का मानना है कि उनको तमाम गुप्त-रोग हैं। सबने समझा-बुझा कर भेजा था कि इन युवतियों से बच कर रहना। उन्हें यह समझाने का मैं कोई प्रयत्न नहीं करता कि मैं शादी-शुदा हूँ। यह उनके लिए मायने नहीं रखता, और भारतीय तर्क उन्हें समझ नहीं आता। मैंने बस हामी भर दी कि बच कर रहूँगा। पर गुप्त-रोग से अधिक उनका प्रकृति-प्रदत्त आपादमस्तक श्वेतांग मुझे विचलित कर रहा था। बाल भी गोरे, और नाखून भी। कुछ लालिमा सी थी, पर वो भी चेहरे पर प्रकाश पड़ने से थी। अन्यथा वो प्रेत-कन्यायें ही थीं। लेकिन सैलानियों में रंग-बिरंगी कन्यायें थीं। चीनीयों का समूह अपनी टेलीफ़ोन ध्वनि में बतिया और चिल्ला रहा था। इंग्लैंड के अंग्रेज आज भी सभ्य नजर आ रहे थे, और बड़े ही अदब से नृत्य कर रहे थे। वहीं अमरीकी टेबल पर चढ़ कर 'डर्टी-डांसिंग' कर रहे थे। और उनसे भी 'डर्टी' गर कूल्हे मटकाने वाले लोग थे, तो वो अफ्रीकी मूल के। भारतीय तो और कोई नजर नहीं आ रहा था। पर हम भी उसी भीड़ में कहीं न कहीं मटक ही रहे थे।

मेरी इच्छा आईसलैंड की प्रेतिनों से मिलने की कभी थी ही नहीं। मैं तो यह जानना चाहता था कि आईसलैंड को महिलाओं के लिए दुनिया का सबसे बेहतर देश क्यों कहा जाता है? यहाँ पुरूष प्रेत से शक्तिशाली प्रेतिन क्यों हैं? यहाँ आखिर महिलाओं ने अपना डंका कैसे बजवाया? और वो भी उन महिलाओं के वंशजों ने, जो कभी वाईकिंग से बलत्कृत कहे जाते रहे।

यह सत्तर के दशक की बात है जब देश की सभी महिलाओं ने तय कर लिया कि उनको बराबरी चाहिए। वो सब की सब हड़ताल पर बैठ गयीं। सभी महिला शिक्षिकाओं ने पढ़ाना त्याग दिया। सभी छोटे-मोटे महिला कर्मियों ने काम रोक दिया। यहाँ तक कि गृहणियों ने भोजन पकाना बंद कर दिया। लगभग 25000 महिलाएँ रेक्ज़ाविक में जमा हुईं, और बराबरी का अधिकार मांगने लगी। संसद में, नौकरियों मे, घर में। हर जगह। पूरा आईसलैंड इन महिलाओं के हड़ताल में रूक गया। यह सिद्ध हो गया कि महिलाओं के बिना देश नहीं चल सकता।

आईसलैंड को पहली महिला राष्ट्रपति मिली। हर सेक्टर में उन्हें बराबरी मिलने लगी। पुरूषों ने भी सहयोग दिया, और जहाँ भी अधिकार कम दिखता, वो खुद ही अधिकार दे देते। हालिया आईसलैंड के फुटबॉल खिलाड़ियों को लगा कि महिला खिलाड़ियों को कम वेतन मिल रहा है। सभी पुरूषों ने स्वयं अपील की, कि उन्हें भले ही कम वेतन दिया जाए पर महिलाओं को बराबर मिले।

यहाँ जब बच्ची अपने पहले स्कूल जाती है, तो उसे बाकी देशों के बच्चियों वाले खेल नहीं सिखाए जाते। ‘बार्बी डॉल’ से खेलने नहीं कहा जाता। एक तीन-चार साल की बच्ची को भी लोहे के बार पर लटका दिया जाता है, और उछल कर रेत में कूदने कहा जाता है। उन्हें ताकतवर बनने का प्रशिक्षण मिलता है। वो दौड़ती हैं, फुटबॉल खेलती हैं। वो पुरूषों से हर खेल में लोहा लेती हैं। यह तो मैं कह चुका हूँ कि अठारह-उन्नीस की युवतियाँ विशाल ट्रक चलाती दिखती हैं। बसें चला रही होती हैं। गर गाड़ी बर्फ के दलदल में फँस जाए, तो धक्का लगाकर निकाल लेती हैं। समंदर में उछल कर सर्फिंग करती है। नाव ले जाकर मछली मार लाती हैं। यही तो है आईसलैंड की प्रेतिनें, जो बाकी विश्व की महिलाओं से अलग नजर आती हैं।

अब इन महिलाओं पर अंकुश लगाना या बलात्कार करना इतना आसान नहीं। ऐसी प्रेतिनें तो हर देश में हो, हर गली में हो।

अलविदा प्रेत!

अब प्रेतों से फुरसत लेकर जाने का वक्त हो गया था, पर प्रेत भी अतिथि-प्रेमी होते हैं। जिद करते हैं कि दो-चार दिन और रूक जाओ। पता नहीं, फिर कब मुलाकात होगी। यह भी इश्क ही है जो मनुष्य और अदृश्य शक्तियों के मध्य है। जैसे ही एयरपोर्ट की ओर जाने लगा, अब सारे रास्ते बंद हो गए। ऑरेंज़ एलर्ट लग गया। यानी अब न गाड़ी चलेगी, न हवाई जहाज। तूफान की गति सौ कि.मी. प्रति घंटा से अधिक, और सब कुछ उड़ रहा है। एयरलाइन्स वालों ने एक बचाव गाड़ी में भेज एक होटल में टिका दिया।

पता लगा कि इस होटल की कमाई ही फ्लाइट के कैंसिल होने से है। और फ्लाइट हफ्ते में कैंसिल होती ही रहती है। हम आए तो वही मुस्की दी, जिसकी जीवन में आदत पड़ गयी है। यह मुस्की पूरी दुनिया में एक समान है।

एयरलाइन्स वालों ने एक पर्ची पकड़ा दी थी, जिससे शहर में भोजन मिल जाता। शहर में! होटल में नहीं। इसे आप 'फ़ूड कूपन' समझ लें, जिसे लेकर शहर में घूमो और किसी भोजनालय में पकड़ा दो। वो भोजन दे देगा। हम भी बौद्ध-भिक्षुओं की तरह इस तूफान में निकल पड़े। अब तक गाड़ियों में घूमा था। पैदल गली-गली घूमना आज ही होने वाला था। पर आईसलैंड में गलियाँ नहीं होती। यहाँ की विशालकाय गाड़ियाँ भला कैसे गलियों में घुस पाएँगी? और ऐसे वीरान देश में पतली गलियाँ भली क्यों हो? चौड़ी सड़कें, और आदमी नदारद।

इन्हीं सड़कों पर घूमते या यूँ कहिए तूफान में हिलते-बहते हमें एक और विचित्र बात दिखी। सफर में कई गाड़ियाँ देखी, पर इस बात पर ध्यान नहीं दिया। यहाँ हर तीसरी गाड़ी पर भूत-प्रेत के तैलचित्र बने हैं। विकराल दाँतों में खून लगी डायनें गाड़ियों को सुशोभित कर रही हैं। मुझे लगा कि हैलोवीन वगैरा मनाने की तैयारी होगी, पर अभी कोई हैलोवीन तो था ही नहीं। यह यहाँ का शौक है कि भूत-प्रेत से गाड़ियाँ सुसज्जित रखें। आखिर देश भी तो भूतों का है।

मेरी तरह पर्चा लिए कई लोग घूम रहे थे। कोई जहाज गया ही नहीं, तो सबके हाथ में भोजन की पर्ची है। जैसे कोई भंडारा लगा हो। अपनी पर्ची से भोजन लेकर बैठ गया। वहीं व्हेल का एक चॉकलेट भी मिल गया। व्हेल के मांस का बना चॉकलेट! विश्व के सबसे बड़े स्तनधारी पशु को एक छोटे से चॉकलेट-रैपर में सिमटा देख लगा कि एक दिन हमें भी यूँ ही 'रैप' हो जाना है। यह गनीमत है कि हमारा चॉकलेट नहीं बनता। हमें जला या दफना दिया जाएगा।

शाम के भोजन के लिए पर्ची लेकर दूर निकल गया। मित्र ने कहा कि आईरिश पब चलते हैं, पर मैं कुछ और ढूँढ रहा था। प्रेत-जिज्ञासा तो अब विविध रूप ले चुकी थी, पर अब

इस आईसलैंड में बस गए दूर-देश के प्रेतों से मिलने की इच्छा थी। किसी अपने की। आईसलैंड जैसे देश में अपने का अर्थ- एशियाई। लगभग तीन कि.मी. टहलने के बाद एक वियतनामी भोजनालय मिल गया। बाकी भोजनालयों में पर्ची से एक बर्गर और कुछ पेय इत्यादि मिल जाते, पर वियतनामी में भरपेट असीमित भोजन की व्यवस्था थी। मैथिल भोजों की तरह। खा-पी डकार कर होटल के मालकिन से बतियाने लगा। वृद्ध एशियाई महिला जिनके आँखों के नीचे झुर्रियाँ आनी पूरी तरह शुरू नहीं हुई थी।

"आपलोग यहाँ कैसे आ गए?"

"मुझे आए तो अब चालीस वर्ष हुए। उस वक्त यह देश ऐसा नहीं था।"

"अच्छा था, या बुरा?"

"अच्छा-बुरा नहीं कह रही। सैलानी कम थे। हमें तो लगा जैसे कि चंद्रमा पर आ गए। पथरीली धरती, और वीरान देश। हम तो उछल-उछल कर चलने भी लगे थे, जैसे चंद्रमा पर चल रहे हों।" यह कह कर वो ठहाके मारने लगी।

"वियतनाम से कई लोग तो नॉर्वे में हैं ही, पर आईसलैंड आना वाकई हिम्मत का काम है।"

"मैं तो नॉर्वे ही जाना चाहती थी, पर यह हमारे हाथ में कहाँ था? जहाँ कैम्प से भेजा गया, चले गए।"

"हाँ! उस युद्ध की कहानी तो हम भी सुनते हैं।"

"युद्ध की क्या कहानी? धमाके, ठाँय-ठाँय-ठाँय-ठाँय। यही देखा होगा?" वो फिर हँसने लगी।

"आप देश लौट कर जाती हैं?"

"हाँ! कई बार जाती हूँ। कैसे नहीं जाऊँगी?"

"लेकिन यहीं रह गईं।"

"इस देश से लौटना आसान कहाँ? आपकी भी तो फ़्लाइट नहीं जा पाई।" और वो फिर अपनी वियतनामी हँसी हँसने लगी।

जब ज्वालामुखी फटती होगी तो उसे वियतनाम के गोलियों की याद तो न आती होगी? यहाँ की प्रेत-बस्तियों में वो अपने परिजन तो न ढूँढती होगी? या वो स्वयं स्वर्ग-नरक के रास्ते में अटक गई कोई प्रेतिन तो नहीं? भला आईसलैंड कोई क्यों आएगा? शरण में आई भी तो प्रेत-बाधा और भूकंप वाले देश में?

मैं सोचने लगा कि कितना अंधविश्वासी व्यक्ति हूँ जो प्रेतों के चक्कर में आईसलैंड आ गया। आज भला प्रेतों को कौन मानता है? और मैं तो लाशों और मृत्यु को आए दिन अस्पताल में देखता हूँ, फिर भला क्यों ऐसे ख्याल रखता हूँ?

विज्ञान-युग में गर पूरे जीवन गोता लगाओ, तो कभी किनारे पर बैठने का मन तो करता ही है। कभी विज्ञान से परे देखने का। कभी हजार वर्ष पीछे लौटने का। उन विश्वासों में जीने का, जिससे कि जीवन सुलभ हो। कौवा मुंडेर पर आकर बैठ जाए, और हम खुशी-खुशी मरने को तैयार हो जाएँ। कोई वेल्लोर-एम्स के चक्कर न लगाएँ, सेकंड ओपिनियन न लें। बस एक कौवे के मुंडेर पर बैठने का इंतजार करें।

हम यह मान कर जियें कि हम अमर हैं। मर कर भी 'हुल्डुफोक' बन कर जियेंगे। और लोग हम पर पत्थर न फेकेंगें। हमारे ऊपर बुलडोज़र न चलाएँगें। हम मर कर भी गुमनाम न होंगे। भले ही जीवन में कुछ न किया हो, याद जरूर किए जाएँगे। और जो भी मुझसे मिलना चाहें, वो बस लकड़ी पर बना एक यंत्र लेकर मुझसे गप्पिया लें। हम अदृष्ट से दृष्ट हो जाएँ। आज के युग में भी इस जादुई दुनिया में जीते इस यूरोपीय देश के लोग शायद उनसे किस्मत वाले हैं जो मृत्यु को अंतिम सत्य मान लेते हैं।

आखिर अगले दिन हवाई जहाज चली और मैं प्रेतों के देश को अलविदा कह चल पड़ा। नीचे खड़े हजारों 'हुल्डुफोक' मुझे हाथ दिखा रहे थे, और मैं उनको हाथ हिला रहा था। उनका शरीर नहीं नजर आ रहा था, बड़े कान और पैर अब भी साफ-साफ दिख रहे थे। क्यूट हैं ये प्रेत!